अधिकार 2

बंध-उदय-सत्त्व अधिकार

स्थिति बंध

स्थिति बंध की विषय-वस्तु

- मूल प्रकृतियों का उत्कृष्ट स्थिति-बंध
- उत्तर प्रकृतियों का उत्कृष्ट स्थिति-बंध
- उत्कृष्ट स्थिति-बंध के स्वामी
- मूल प्रकृतियों का जघन्य स्थिति-बंध
- उत्तर प्रकृतियों का जघन्य स्थिति-बंध
- एकेंद्रिय आदि में उत्कृष्ट स्थिति-बंध
- एकेंद्रिय आदि में जघन्य बंध निकालने की विधि
- जीवसमास में स्थिति-बंध के जघन्य-उत्कृष्ट भेद
- जघन्य स्थिति-बंध के स्वामी
- स्थिति-बंध के उत्कृष्ट आदि प्रकार
- आबाधा
- कर्मों की निषेक रचना

तीसं कोडाकोडी, तिघादितदिएसु वीस णामदुगे ।
सत्तरि मोहे सुद्धं, उवही आउस्स तेतीसं ॥127॥

- अन्वयार्थ – (तिघादितदिएसु) ज्ञानावरण, दर्शनावरण, अंतराय ये तीन घातिकर्म और तीसरा वेदनीय कर्म इनमें (उत्कृष्ट स्थितिबंध) (तीसं कोडाकोडी) तीस कोड़ाकोड़ी सागर है ।
- (णामदुगे) नाम और गोत्रकर्म में (वीस) बीस कोड़ाकोड़ी सागर,
- (मोहे) मोहनीय में (सत्तरि) सत्तर कोड़ाकोड़ी सागर उत्कृष्ट स्थितिबंध होता है।
- (आउस्स) आयु का उत्कृष्ट स्थितिबंध (सुद्धं) शुद्ध (तेतीसं उवही) तैतीस सागर होता है ॥127॥

www.JainKosh.org

मूल प्रकृतियों का उत्कृष्ट स्थिति-बन्ध

प्रकृति	बन्ध
ज्ञानावरण, दर्शनावरण, अंतराय, वेदनीय	30 कोड़ाकोड़ी सागर
नाम, गोत्र	20 कोड़ाकोड़ी सागर
मोहनीय	70 कोड़ाकोड़ी सागर
आयु	33 सागर

1 कोड़ा-कोड़ी = 1 करोड़ x 1 करोड़

1 सागर = 10 कोड़ा-कोड़ी पल्य

1 पल्य = असंख्यात वर्ष

उत्कृष्ट स्थिति-बन्ध अर्थात् वर्तमान समय से लेकर इतने समय तक कर्म का सत्त्व पाया जाता है ।

आबाधाकाल में निषेक रचना नहीं पायी जाती है ।

आबाधा को छोड़कर शेष सर्व स्थिति के समयों में कर्म पाया जाता है ।

दुक्खतिघादीणोघं, सादित्थीमणुदुगे तदद्धं तु ।
सत्तरि दंसणमोहे, चरित्तमोहे य चत्तालं ॥128॥
संठाणसंहदीणं, चरिमस्सोघं दुहीणमादित्ति ।
अट्ठरसकोडकोडी, वियलाणं सुहुमतिण्हं च ॥129॥
अरदीसोगे संढे, तिरिक्खभयणिरयतेजुरालदुगे ।
वेगुव्वादावदुगे, णीचे तसवण्णअगुरुति चउक्के ॥130॥
इगिपंचेंदियथावर-णिमिणासग्गमणअथिरछक्काणं ।
वीसं कोडाकोडी-सागरणामाणमुक्कस्सं ॥131॥
हस्सरदि उच्चपुरिसे, थिरछक्के सत्थगमणदेवदुगे ।
तस्सद्धमंतकोडा-कोडी आहारतित्थयरे ॥132॥
सुरणिरयाऊणोघं, णरतिरियाऊण तिण्णि पल्लाणि ।
उक्कस्सट्ठिदिबंधो, सण्णीपज्जत्तगे जोग्गे ॥133॥

◎अन्वयार्थ – उत्कृष्ट स्थितिबन्ध (दुक्खतिघादीणोघं) असाता वेदनीय और तीन घाति की उन्नीस प्रकृतियों का ओघ के समान तीस कोड़ाकोड़ी सागर है । (तु सादित्थीमणुदुगे) साता वेदनीय, स्त्रीवेद, मनुष्यगति, मनुष्यगत्यानुपूर्वी का (तदद्धं) उसका आधा अर्थात् पंद्रह कोड़ाकोड़ी सागर है ।

◎(दंसणमोहे) दर्शन मोहनीय का (सत्तरि) सत्तर कोड़ाकोड़ी सागर (य) और (चरित्तमोहे) चारित्रमोहनीयरूप सोलह कषाय का (चत्तालं) चालीस कोड़ाकोड़ी सागर है ॥128॥

◎अन्वयार्थ – (संठाणसंहदीणं) संस्थान और संहननों में से (चरिमस्स) अंतिम संस्थान और अंतिम संहनन का (ओघं) सामान्य नामकर्म के समान बीस कोड़ाकोड़ी सागर है ।

◎(दुहीणमादित्ति) प्रथम संस्थान और संहनन तक दो-दो कोड़ाकोड़ी सागर कम है । (वियलाणं) विकलत्रय (च) और (सुहुमतिण्हं) सूक्ष्मत्रय का (अट्ठरसकोडकोडी) अठारह कोड़ाकोड़ी सागर है ॥129॥

www.JainKosh.org

◎ अन्वयार्थ - (अरदीसोगे) अरति, शोक (संढे) नपुंसकवेद (तिरिक्खभयणिरय-तेजुरालदुगे) तिर्यंचद्विक, भयद्विक, नरकद्विक, तैजसद्विक, औदारिकद्विक (वेगुव्वादावदुगे) वैक्रियिकद्विक, आतापद्विक (णीचे) नीच गोत्र (तसवण्णअगुरुतिचउक्के) त्रसचतुष्क, वर्णचतुष्क और अगुरुलघुचतुष्क (इगिपंचिंदियथावरणिमिणासग्गमण अथिरछक्काणं) एकेन्द्रिय, पंचेन्द्रिय, स्थावर, निर्माण, अप्रशस्त विहायोगति और अस्थिरषट्क अर्थात् अस्थिर, अशुभ, दुर्भग, दुःस्वर, अनादेय, अयशस्कीर्ति – इस प्रकार (णामाणं) इकतालीस नामकर्म की प्रकृतियों का (उक्कस्सं) उत्कृष्ट स्थितिबन्ध (वीसं कोडाकोडीसागर) बीस कोड़ाकोड़ी सागर है ॥130-131॥

◎ अन्वयार्थ – (हस्सरदि उच्चपुरिसे) हास्य, रति, उच्चगोत्र, पुरुषवेद (थिरछक्के) स्थिर-षट्क (सत्थगमणदेवदुगे) प्रशस्त विहायोगति, देवगतिद्विक – इन प्रकृतियों का उत्कृष्ट स्थितिबंध (तस्सद्धं) उससे आधा अर्थात् दस कोड़ाकोड़ीसागर है । (आहारतित्थयरे) आहारकद्विक और तीर्थंकर का (अंतकोडाकोडी) अंत:कोड़ाकोड़ी सागर है ॥132॥

◎ अन्वयार्थ – (सुरणिरयाऊणोघं) देवायु और नरकायु का सामान्य के समान अर्थात् तैतीस सागर है। (णरतिरियाऊण) मनुष्यायु, तिर्यंचायु का (तिण्णि पल्लाणि) तीन पल्य (उक्कस्सट्ठिदिबंधो) उत्कृष्ट स्थितिबंध है ।

◎ यह उत्कृष्ट स्थितिबंध (जोग्गे सण्णीपज्जत्तगे) योग्य संज्ञी पर्याप्तक को ही होता है ॥133॥

www.JainKosh.org

उत्तर प्रकृतियों का उत्कृष्ट स्थिति-बन्ध

प्रकृति	स्थिति-बन्ध
असाता वेदनीय	30 को.को. सागर
3 घातिया कर्म — ज्ञानावरण 5 दर्शनावरण 9 अंतराय 5	30 को.को. सागर
साता वेदनीय — मूल का आधा 30/2 =	15 को-2 सा
मनुष्य-2	15 को-2 सा
स्त्री वेद	15 को-2 सा
मोहनीय — दर्शन मोहनीय	70 को-2 सा
चारित्र मोहनीय — 16	40 को-2 सा

प्रकृति	स्थिति-बन्ध
असंप्राप्ता-सृपाटिका संहनन, हुण्डक संस्थान	20 को-2 सा
कीलक संहनन, वामन संस्थान	18 को-2 सा
अर्ध-नाराच संहनन, कुब्जक संस्थान	16 को-2 सा
नाराच संहनन, स्वाति संस्थान	14 को-2 सा
वज्रनाराच संहनन, न्यग्रोध संस्थान	12 को-2 सा
वज्रऋषभनाराच संहनन, समचतुरस्र संस्थान	10 को-2 सा
सूक्ष्म, अपर्याप्त, साधारण	18 को-2 सा
विकलेन्द्रिय	18 को-2 सा

उत्तर प्रकृतियों का उत्कृष्ट स्थिति-बन्ध

प्रकृति	स्थिति-बन्ध
अरति, शोक, नपुंसकवेद, भय, जुगुप्सा	20 को-2 सा
तिर्यंच-2, नरक-2	20 को-2 सा
तैजस-2, औदारिक-2, वैक्रियिक-2	20 को-2 सा
आतप, उद्योत	20 को-2 सा
नीच गोत्र	20 को-2 सा
त्रस-4	20 को-2 सा
वर्ण-4	20 को-2 सा
अगुरुलघु, उपघात, परघात, उच्छ्वास	20 को-2 सा
एकेन्द्रिय, पंचेन्द्रिय	20 को-2 सा

प्रकृति	स्थिति-बन्ध
स्थावर, निर्माण, अप्रशस्त विहायोगति	20 को-2 सा
अस्थिर-6	20 को-2 सा
हास्य, रति, पुरुषवेद	10 को-2 सा
उच्च गोत्र	10 को-2 सा
स्थिर-6	10 को-2 सा
प्रशस्त विहायोगति	10 को-2 सा
देव-2	10 को-2 सा
आहारक-2, तीर्थंकर	अंत: को.को. सागर
देवायु, नरकायु	33 सागर
मनुष्यायु, तिर्यंचायु	3 पल्य

याद रखने के लिए

— सामान्य नियम —

पाप प्रकृतियों में जितना मूल में स्थिति-बंध है, वह होता है।

पुण्य प्रकृतियों में मूल का आधा होता है।

वेदनीय में असाता का मूल जितना अर्थात् 30 कोड़ाकोड़ी सागर

साता का इसका आधा = 15 कोड़ाकोड़ी सागर

गोत्र में नीच गोत्र का मूल जितना अर्थात् 20 कोड़ाकोड़ी सागर

उच्च गोत्र का इसका आधा = 10 कोड़ाकोड़ी सागर

www.JainKosh.org

याद रखने के लिए

ज्ञानावरण, दर्शनावरण, अन्तराय इनमें तो बंध मूल के अनुसार ही है ।

आयु में जैसा बताया, वैसा ही जानना ।

मोहनीय में मिथ्यात्व का बंध मूल जितना = 70 को-2 सा

चारित्र मोहनीय का = 40 को-2 सा

नोकषाय (सामान्य) का इसका आधा = 20 को-2 सा

नोकषाय में द्वेषरूप नोकषायों का पूरा =20

भय, जुगुप्सा, अरति, शोक = 20

रागरूप नोकषायों का आधा = 10

हास्य, रति = 10

3 वेदों में सबसे अप्रशस्त
नपुंसकवेद का = 20

उससे कम अप्रशस्त
स्त्रीवेद का = 15

उससे कम अप्रशस्त
पुरुषवेद का = 10

नाम कर्म में कुछ प्रकृतियों को छोड़कर अधिकांश प्रकृतियों का उत्कृष्ट बन्ध 20 कोड़ाकोड़ी सागर है ।

1) स्थिर-6, प्रशस्त विहायोगति, देव-2 का = 10 कोड़ाकोड़ी सागर

2) संस्थान, संहनन के क्रमशः 2-2 कोड़ाकोड़ी सागर कम करते हुए

3) विकलत्रय, सूक्ष्म-3 का = 18 कोड़ाकोड़ी सागर

4) मनुष्य-2 का = 15 कोड़ाकोड़ी सागर

5) आहारक-2, तीर्थंकर का अंतः कोड़ाकोड़ी सागर

शेष सभी का 20 कोड़ाकोड़ी सागर उत्कृष्ट बन्ध है ।

त्रस-चतुष्क तो पुण्य प्रकृतियाँ हैं ।
इनका 20 को-2 बंध क्यों है?
10 को-2 क्यों नहीं ?

यद्यपि त्रस-चतुष्क पुण्य प्रकृतियाँ हैं तथापि ये प्रकृतियाँ नरक-2, तिर्यंच-2 के साथ भी बंधती हैं ।

तब विशिष्ट संक्लेश के कारण इनका उत्कृष्ट बंध नरक-2 के समान 20 को-2 प्रमाण हो जाता है ।

अतः इनका उत्कृष्ट बंध 10 को-2 ना होकर 20 को-2 प्रमाण कहा है ।

www.JainKosh.org

सव्वट्ठिदीणमुक्कस्सओ दु उक्कस्ससंकिलेसेण ।
विवरीदेण जहण्णो, आउगतियवज्जियाणं तु ॥134॥

- अन्वयार्थ- (आउगतियवज्जियाणं) तीन आयुओं को छोड़कर शेष (सव्वट्ठिदीणमुक्कस्सओ) सर्व प्रकृतियों का उत्कृष्ट स्थितिबन्ध (उक्कस्ससंकिलेसेण) उत्कृष्ट संक्लेश परिणामों से होता है ।
- (जहण्णो) तथा जघन्य स्थितिबन्ध (विवरीदेण) विपरीत अर्थात् उत्कृष्ट विशुद्ध परिणाम से होता है ॥134॥

www.JainKosh.org

स्थिति-बन्ध

प्रकृति	उत्कृष्ट	जघन्य
117 प्रकृतियाँ	उत्कृष्ट संक्लेश परिणामों से	उत्कृष्ट विशुद्ध परिणामों से
तिर्यंचायु, मनुष्यायु, देवायु	उत्कृष्ट विशुद्ध परिणामों से	उत्कृष्ट संक्लेश परिणामों से

www.JainKosh.org

सव्वुक्कस्सठिदीणं, मिच्छाइट्ठी दु बंधगो भणिदो ।
आहारं तित्थयरं, देवाउं चावि मोत्तूणं ॥135॥

◎अन्वयार्थ - (आहारं) आहारकद्विक (तित्थयरं) तीर्थंकर (वा) और (देवाउं) देवायु को (अवि मोत्तूण) भी छोड़कर शेष (सव्वुक्कस्सठिदीणं) सर्व प्रकृतियों की उत्कृष्ट स्थितियों का (बंधगो) बंधक (मिच्छादिट्ठी दु) मिथ्यादृष्टि को ही (भणिदो) कहा है ॥135॥

www.JainKosh.org

उत्कृष्ट स्थिति-बंध का स्वामित्व

116 प्रकृतियाँ

मिथ्यादृष्टि

आहारक-2, तीर्थंकर, देवायु

सम्यग्दृष्टि

क्योंकि 1) आहारक-2, तीर्थंकर प्रकृतियाँ सम्यग्दृष्टि के ही बन्धती हैं, अतः उनका उत्कृष्ट बन्ध भी सम्यग्दृष्टि के ही होगा ।

2) देवायु का उत्कृष्ट स्थिति-बन्ध 33 सागर प्रमाण है, जो मुनिराज ही बाँध सकते हैं, अतः इसका उत्कृष्ट बन्ध भी सम्यग्दृष्टि के ही संभव है ।

3) शेष प्रकृतियाँ मिथ्यादृष्टि के बन्धती हैं अतः वह उनके उत्कृष्ट बन्ध का स्वामी होता है ।

देवाउगं पमत्तो, आहारयमप्पमत्तविरदो दु ।
तित्थयरं च मणुस्सो, अविरदसम्मो समज्जेइ ॥136॥

- अन्वयार्थ – (देवाउगं) देवायु की उत्कृष्ट स्थिति को (पमत्तो) प्रमत्त गुणस्थान वाला जीव
- (आहारयं) आहारकद्विक की उत्कृष्ट स्थिति को (अप्पमत्तविरदो) अप्रमत्तविरत जीव
- (च) और (तित्थयरं) तीर्थंकर की उत्कृष्ट स्थिति को (अविरदसम्मो मणुस्सो) अविरत सम्यग्दृष्टि मनुष्य (समज्जेइ) बांधता है ॥136॥

www.JainKosh.org

उत्कृष्ट स्थिति-बंध के स्वामी

देवायु	• अप्रमत्त गुणस्थान चढ़ने को सम्मुख प्रमत्तसंयत
आहारक-2	• प्रमत्त गुणस्थान के सम्मुख अप्रमत्तसंयत
तीर्थंकर	• मिथ्यात्व गुणस्थान के सम्मुख असंयत सम्यग्दृष्टि

देवायु का उत्कृष्ट बंध विशुद्ध परिणामों से होता है और प्रमत्त की अपेक्षा अप्रमत्त के परिणाम अधिक विशुद्ध होते हैं । अतः देवायु का उत्कृष्ट स्थिति-बंध अप्रमत्त में होना चाहिए; प्रमत्त में नहीं?

आयु बंध का यह नियम है कि जब आयु बंधना प्रारंभ होती है, तब प्रत्येक समय में जो स्थिति बंध होता है, वह घट-घट कर ही होता है ।

प्रथम समय में जो स्थिति-बंध हुआ है, उसके अगले समय में हीन ही स्थिति-बंध होगा ।

तृतीय समय में और भी हीन स्थिति-बंध होगा । अतः उत्कृष्ट स्थिति-बंध आयु-बंध के प्रथम समय में ही होगा — यह निश्चित हुआ ।

दूसरी बात यह है कि अप्रमत्त गुणस्थान में आयु का बंध प्रारंभ नहीं होता । वहाँ आयु-बंध का प्रस्थापक नहीं होता है । हाँ, आयु प्रमत्तसंयत में बंधना प्रारंभ हो गयी हो और आयु बंध का अंतर्मुहूर्त काल पूर्ण नहीं होने के पूर्व अप्रमत्तसंयत हो जाये तो वही आयु अपने बंध-काल तक अप्रमत्तसंयत में बंधती रहेगी – ऐसा नियम है ।

ऐसी स्थिति में अप्रमत्तसंयत में आयु-बंध उत्कृष्ट नहीं होता है। प्रमत्तसंयत में जब आयु बंधना प्रारंभ होती है, तब तत्प्रायोग्य विशुद्ध परिणाम से प्रथम समय में उत्कृष्ट स्थिति-बंध संभव है; अप्रमत में नहीं ।

www.JainKosh.org

आहारक-2

आहारक-2 का उत्कृष्ट स्थिति-बंध संक्लेश परिणामों से होता है । ऐसे परिणाम होने पर प्रमत्तसंयत के अभिमुख होता है ।

अतः प्रमत्तसंयत के अभिमुख अप्रमत्तसंयत जीव के आहारक-2 का उत्कृष्ट स्थिति-बंध कहा है ।

तीर्थंकर

तीर्थंकर का भी उत्कृष्ट स्थिति-बंध संक्लेश परिणामों से होता है । ऐसे उत्कृष्ट संक्लेश परिणाम उसी क्षायोपशमिक सम्यग्दृष्टि के होते हैं जो मिथ्यात्व के सम्मुख है ।

अतः मिथ्यात्व गुणस्थान के सम्मुख असंयत सम्यग्दृष्टि के तीर्थंकर का उत्कृष्ट स्थिति-बंध कहा है ।

णरतिरिया सेसाउं, वेगुव्वियछक्कवियलसुहुमतियं ।
सुरणिरया ओरालिय-तिरियदुगुज्जोवसंपत्तं ॥137॥
देवा पुण एइंदिय, आदावं थावरं च सेसाणं ।
उक्कस्ससंकिलिट्ठा, चदुगदिया ईसिमज्झिमया ॥138॥

- अन्वयार्थ – (सेसाउं) देवायु बिना शेष तीन आयु (वेगुव्वियछक्क) वैक्रियिक षट्क (वियलतियं) विकलत्रय और (सुहुमतियं) सूक्ष्मत्रिक – इनका उत्कृष्ट स्थितिबंध (णरतिरिया) मनुष्य और तिर्यञ्च जीव ही करते हैं ।
- (ओरालियतिरियदुगुज्जोवसंपत्तं) औदारिकद्विक, तिर्यञ्चद्विक, उद्योत, असम्प्राप्तासृपाटिका संहनन की उत्कृष्ट स्थिति (सुरणिरया) मिथ्यादृष्टि देव और नारकी जीव बांधते हैं ॥137॥
- अन्वयार्थ – (पुण एइंदिय आदावं थावरं च) एकेन्द्रिय, आतप और स्थावर – इन प्रकृतियों की उत्कृष्ट स्थिति (देवा) मिथ्यादृष्टि देव बांधते हैं ।
- (सेसाणं) शेष 92 प्रकृतियों की उत्कृष्ट स्थिति (उक्कस्ससंकिलिट्ठा) उत्कृष्ट संक्लेश वाले और (ईसिमज्झिमया) ईषत्मध्यम संक्लेश परिणाम वाले (चदुगदिया) चारों गतियों के जीव बांधते हैं ॥138॥

www.JainKosh.org

उत्कृष्ट स्थिति-बंध - स्वामी

प्रकृति	स्वामी (सभी मिथ्यादृष्टि)
नरकायु, तिर्यंचायु, मनुष्यायु वैक्रियिक-6 विकलत्रय सूक्ष्म-3	मनुष्य या तिर्यंच
औदारिक-2, तिर्यंच-2, उद्योत, असंप्राप्तासृपाटिका संहनन	देव या नारकी
एकेन्द्रिय, आतप, स्थावर	देव
शेष 92 (116 — 15 — 6 — 3 = 92)	उत्कृष्ट या ईषत् या मध्यम संक्लिष्ट चारों गति के जीव

उत्कृष्ट, मध्यम, ईषत् परिणामों का प्रकार जैसा अध:प्रवृत्तकरण में कहा है, वैसा जानना ।

प्रथम खण्ड = ईषत् संक्लेश परिणाम

मध्यम खण्ड = मध्यम संक्लेश परिणाम

अंतिम खण्ड = उत्कृष्ट संक्लेश परिणाम

16	222	54	55	56	57
15	218	53	54	55	56
14	214	52	53	54	55
13	210	51	52	53	54
12	206	50	51	52	53
11	202	49	50	51	52
10	198	48	49	50	51
9	194	47	48	49	50
8	190	46	47	48	49
7	186	45	46	47	48
6	182	44	45	46	47
5	178	43	44	45	46
4	174	42	43	44	45
3	170	41	42	43	44
2	166	40	41	42	43
1	162	39	40	41	42
स्थिति-बंध	परिणामों की संख्या	अनुकृष्टि के खंड			

अधःप्रवृत्त करण के समयों की अनुकृष्टि रचनावत्

अनुकृष्टि रचना

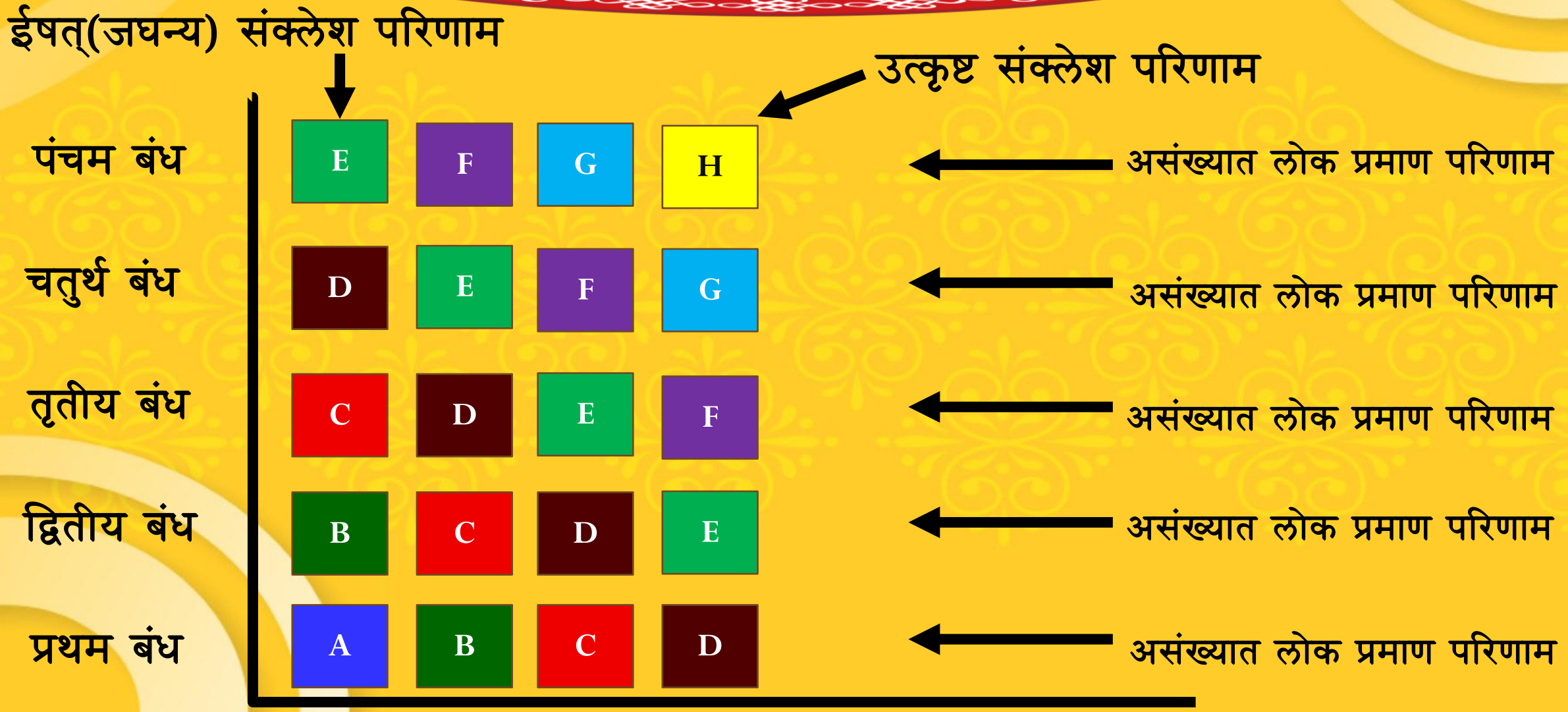

www.JainKosh.org

अनुकृष्टि रचना

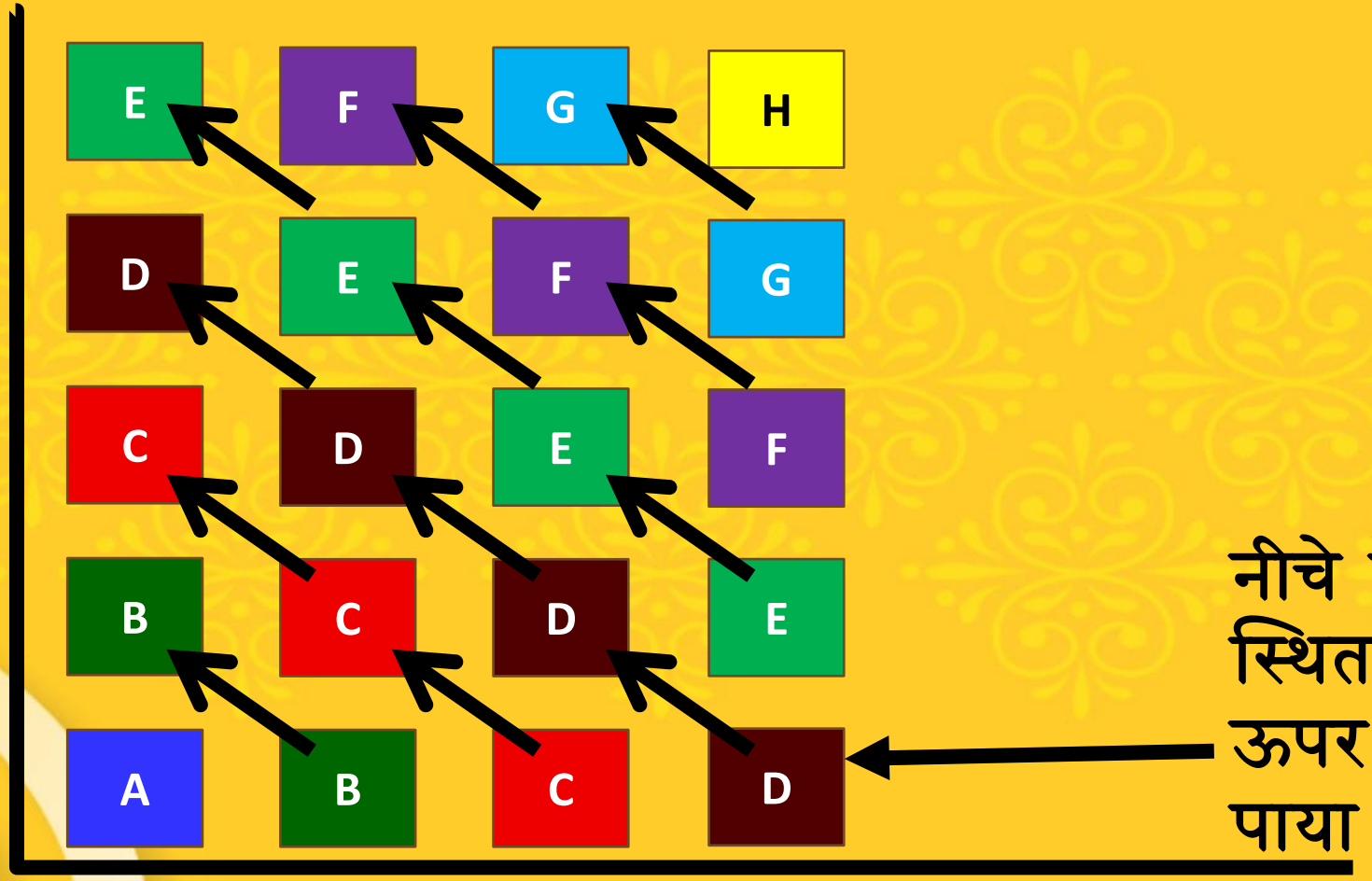

www.JainKosh.org

4	174	42	43	44	45
		(121-162)	(163-205)	(206-249)	(250-294)
3	170	41	42	43	44
		(80-120)	(121-162)	(163-205)	(206-249)
2	166	40	41	42	43
		(40-79)	(80-120)	(121-162)	(163-205)
1	162	39	40	41	42
		(1-39)	(40-79)	(80-120)	(121-162)
स्थिति-बंध	**परिणामों की संख्या**	**अनुकृष्टि के खंड**			

www.JainKosh.org

70 कोड़ाकोड़ी सागर

उत्कृष्ट स्थिति को बांधने वाले परिणामों की संख्या 222 (इन सभी परिणामों से उत्कृष्ट स्थिति बंध होगा।)

यहाँ प्रथम खंड ईषत् संक्लेश परिणाम वाला कहलाता है ।

अंतिम खंड उत्कृष्ट संक्लेश परिणाम वाला कहलाता है ।

शेष मध्य के असंख्यात खंड मध्यम संक्लेश परिणाम वाले कहलाते हैं ।

अनुकृष्टि के खंड

54	55	56	57
691-744	745-799	800-855	856-912

ईषत् संक्लेश परिणाम

मध्यम संक्लेश परिणाम

उत्कृष्ट संक्लेश परिणाम

www.JainKosh.org

बारस य वेयणीये, णामागोदे य अट्ठ य मुहुत्ता ।
भिण्णमुहुत्तं तु ठिदी, जहण्णयं सेसपंचण्हं ॥139॥

- अन्वयार्थ – (वेयणीये) वेदनीय कर्म का जघन्य स्थितिबन्ध (बारस मुहुत्ता) बारह मुहूर्त है।
- (य) और (णामागोदे) नाम व गोत्रकर्म का (अट्ठ) आठ मुहूर्त है ।
- (सेसपंचण्हं) अवशेष पाँच कर्मों का (जहण्णयं ठिदी) जघन्य स्थितिबंध (भिण्णमुहुत्तं तु) भिन्नमुहूर्त अर्थात् अन्तर्मुहूर्त है ॥139॥

www.jinkosh.org

मूल प्रकृतियों का जघन्य स्थिति-बन्ध

वेदनीय	नाम, गोत्र	शेष 5
12 मुहूर्त	8 मुहूर्त	अंतर्मुहूर्त

www.JainKosh.org

लोहस्स सुहुमसत्तरसाणं ओघं दुगेक्कदलमासं ।
कोहतिये पुरिसस्स य, अट्ठ य वस्सा जहण्णठिदी ॥140॥

- अन्वयार्थ - (लोहस्स) लोभ और (सुहुमसत्तरसाणं) सूक्ष्मसांपराय में बन्धने वाली सतरह प्रकृतियों का जघन्य स्थितिबंध (ओघं) अपनी-अपनी मूलप्रकृतियों के समान है।
- (कोहतिये) संज्वलन क्रोध, मान, माया का क्रम से (दुगेक्कदलमासं) दो मास, एक मास और पन्द्रह दिन है ।
- (य) और (पुरिसस्स) पुरुषवेद की (जहण्णठिदि) जघन्य स्थिति (अट्ठ य वस्सा) आठ वर्ष है ॥140॥

www.JainKosh.org

उत्तर प्रकृतियों का जघन्य स्थिति-बन्ध

कर्म प्रकृति	बंध का प्रमाण
सूक्ष्म-सांपराय में बध्यमान 17 प्रकृति ज्ञानावरण-5, दर्शनावरण-4, अंतराय-5	ओघ के अनुसार अंतर्मुहूर्त
साता वेदनीय	12 मुहूर्त
उच्च गोत्र, यश	8 मुहूर्त
संज्वलन लोभ	अंतर्मुहूर्त
संज्वलन क्रोध	2 मास
संज्वलन मान	1 मास
संज्वलन माया	15 दिन
पुरुषवेद	8 वर्ष

तित्थाहाराणंतो-कोडाकोडी जहण्णठिदिबंधो ।
खवगे सगसगबंधण-छेदणकाले हवे णियमा ॥141॥

- अन्वयार्थ – (तित्थाहाराण) तीर्थंकर और आहारकद्विक का (जहण्णठिदिबंधो) जघन्य स्थितिबंध (अंतोकोडाकोडी) अन्त:कोड़ाकोड़ी सागर प्रमाण है ।
- वह (खवगे) क्षपकश्रेणी में (सगसगबंधणछेदणकाले) अपनी-अपनी बन्ध-व्युच्छित्ति के समय (णियमा) नियम से (हवे) होता है ॥141॥

उत्तर प्रकृतियों का जघन्य स्थिति-बन्ध

तीर्थंकर	• अंत:कोड़ाकोड़ी सागर
आहारक-2	• अंत:कोड़ाकोड़ी सागर

ये सारे जघन्य बन्ध क्षपक श्रेणी पर आरूढ़ जीव के बन्ध-व्युच्छित्ति के अंतिम स्थिति-बंध में होते हैं ।

भिण्णमुहुत्तो णरतिरियाऊणं वासदससहस्साणि । सुरणिरयआउगाणं, जहण्णओ होदि ठिदिबंधो ॥142॥

◎अन्वयार्थ - (णरतिरिआऊणं) मनुष्यायु और तिर्यञ्चायु का जघन्य स्थितिबंध (भिण्णमुहुत्तो) अन्तर्मुहूर्त (श्वास का अठारहवाँ भाग) और (सुरणिरय आउगाणं) देवायु और नरकायु का (जहण्णओ ठिदिबंधो) जघन्य स्थितिबंध (वासदससहस्साणि) दस हजार वर्ष प्रमाण (होदि) है ॥142॥

मनुष्यायु, तिर्यंचायु	• अंतर्मुहूर्त (क्षुद्रभव प्रमाण)
देवायु, नरकायु	• 10,000 वर्ष

www.JainKosh.org

सेसाणं पज्जत्ते, बादरएइंदियो विसुद्धो य ।
बंधदि सव्वजहण्णं, सगसगउक्कस्सपडिभागे ॥143॥

◎अन्वयार्थ – (सेसाणं) उपर्युक्त गाथाओं में वर्णित 29 प्रकृतियों के बिना शेष 91 प्रकृतियों में से 85 प्रकृतियों का (विसुद्धो बादरएइंदियो) विशुद्ध बादर एकेन्द्रिय जीव (सगसग उक्कस्सपडिभागे) अपनी-अपनी उत्कृष्ट स्थिति के प्रतिभाग में (सव्वजहण्णं) सब से जघन्य स्थिति को (बंधदि) बांधता है ॥143॥

www.JainKosh.org

जघन्य स्थिति का स्वामी

शेष प्रकृतियाँ 120 – 29 = 91

वैक्रियिक-6 को छोड़कर शेष 85 प्रकृतियाँ का जघन्य बंध यथायोग्य विशुद्ध परिणाम वाला बादर एकेन्द्रिय पर्याप्त करता है ।

वैक्रियिक-6 प्रकृतियाँ का जघन्य बंध यथायोग्य विशुद्ध परिणाम वाला असंज्ञी पर्याप्त करता है ।

बन्ध का प्रमाण = अपना-अपना प्रतिभाग

एयं पणकदि पण्णं, सयं सहस्सं च मिच्छवरबंधो । इगिविगलाणं अवरं, पल्लासंखूणसंखूणं ॥144॥

- अन्वयार्थ – (इगिविगलाणं) एकेन्द्रिय और विकलेन्द्रियों के (मिच्छवरबंधो) मिथ्यात्व का उत्कृष्ट स्थितिबन्ध क्रम से (एयं) एक सागर (पणकदि) पच्चीस सागर (पण्णं) पचास सागर (सयं) सौ सागर (च) और (सहस्सं) हजार सागर होता है ।
- (अवरं) जघन्य स्थितिबंध एकेन्द्रिय जीव अपनी उत्कृष्ट स्थिति से (पल्लासंखूण) पल्य के असंख्यातवें भाग कम और द्वीन्द्रिय, त्रीन्द्रिय, चतुरिन्द्रिय, असंज्ञी पंचेन्द्रिय अपनी-अपनी उत्कृष्ट स्थिति से (पल्लसंखूणं) पल्य के संख्यातवें भाग प्रमाण कम बांधता है ॥144॥

www.JainKosh.org

एकेन्द्रिय आदि में मिथ्यात्व का उत्कृष्ट, जघन्य स्थिति-बंध

	उत्कृष्ट	जघन्य
एकेन्द्रिय	1 सागर	1 सागर – $\frac{\text{पल्य}}{\text{असंख्यात}}$
द्वीन्द्रिय	25 सागर	25 सागर – $\frac{\text{पल्य}}{\text{संख्यात}}$
त्रीन्द्रिय	50 सागर	50 सागर – $\frac{\text{पल्य}}{\text{संख्यात}}$
चतुरिन्द्रिय	100 सागर	100 सागर – $\frac{\text{पल्य}}{\text{संख्यात}}$
असंज्ञी पंचेन्द्रिय	1000 सागर	1000 सागर – $\frac{\text{पल्य}}{\text{संख्यात}}$

जदि सत्तरिस्स एत्तिय-मेत्तं किं होदि तीसियादीणं । इदि संपादे सेसाणं इगिविगलेसु उभयठिदी ॥145॥

- अन्वयार्थ – (जदि) यदि (सत्तरिस्स) 70 कोड़ाकोड़ी सागर स्थिति वाले मिथ्यात्व का (एत्तियमेत्तं) इतना स्थिति-बंध होता है तो (तीसियादीणं) तीस कोड़ाकोड़ी सागर आदि स्थिति वाले कर्मों का (किं) कितना स्थिति-बंध (होदि) होता है ?
- (इदि) इस प्रकार (संपादे) त्रैराशिक करने पर (इगिविगलेसु) एकेन्द्रिय और विकलेन्द्रियों में (सेसाणं) शेष प्रकृतियों की (उभयठिदी) उत्कृष्ट और जघन्य स्थिति का प्रमाण निकल आता है ॥145॥

www.JainKosh.org

एकेन्द्रिय को चारित्र मोहनीय कर्म का उत्कृष्ट स्थिति-बंध

- यदि 70 कोड़ाकोड़ी सागर वाले कर्म का बंध 1 सागर है,
- तो 40 कोड़ाकोड़ी सागर वाले कर्म का बंध कितना होगा ?
- $= \frac{1 \text{ सागर}}{70 \text{ कोड़ाकोडी सागर}} \times 40$ कोड़ाकोड़ी सागर
- $\frac{4}{7}$ सागर
- अत: एकेन्द्रिय को चारित्र मोहनीय कर्म का उत्कृष्ट बंध $\frac{4}{7}$ सागर होता है, इससे अधिक नहीं ।

www.JainKosh.org

एकेन्द्रिय को शेष कर्मों का उत्कृष्ट स्थिति-बंध

इसी प्रकार 30 कोड़ाकोड़ी सागर वाले कर्म का उत्कृष्ट बन्ध $\frac{3}{7}$ सागर होता है ।

20 कोड़ाकोड़ी सागर वाले कर्म का उत्कृष्ट बंध $\frac{2}{7}$ सागर होता है ।

द्वीन्द्रिय आदि में उत्कृष्ट स्थिति-बंध

- ऐसे ही द्वीन्द्रिय जीव के त्रैराशिक विधि से उत्कृष्ट बंध निकालना चाहिए ।
- यदि 70 कोड़ाकोड़ी सागर वाले कर्म का बंध 25 सागर है तो 40 कोड़ाकोड़ी सागर वाले कर्म का बंध कितना होगा ?
- $\frac{25 \text{ सागर}}{70 \text{ कोड़ाकोड़ी सागर}} \times 40$ कोड़ाकोड़ी सागर
- $= \frac{4}{7} \times 25$ सागर $= \frac{100}{7}$ सागर
- इसी प्रकार त्रीन्द्रिय, चतुरिन्द्रिय, असंज्ञी जीव का भी उत्कृष्ट स्थिति-बंध निकालना चाहिए ।

www.JainKosh.org

एकेन्द्रिय आदि में उत्कृष्ट स्थिति-बंध

	मिथ्यात्व	चारित्र मोहनीय	ज्ञानावरण - 4	नाम-गोत्र
एकेन्द्रिय	1 सागर	$\frac{4}{7}$ सागर	$\frac{3}{7}$ सागर	$\frac{2}{7}$ सागर
द्वीन्द्रिय	25 सागर	$\frac{100}{7}$ सागर	$\frac{75}{7}$ सागर	$\frac{50}{7}$ सागर
त्रीन्द्रिय	50 सागर	$\frac{200}{7}$ सागर	$\frac{150}{7}$ सागर	$\frac{100}{7}$ सागर
चतुरिन्द्रिय	100 सागर	$\frac{400}{7}$ सागर	$\frac{300}{7}$ सागर	$\frac{200}{7}$ सागर
असंज्ञी पंचेन्द्रिय	1000 सागर	$\frac{4000}{7}$ सागर	$\frac{3000}{7}$ सागर	$\frac{2000}{7}$ सागर

सण्णि असण्णिचउक्के, एगे अंतोमुहुत्तमाबाहा ।
जेट्ठे संखेज्जगुणा, आवलिसंखं असंखभागहियं ॥146॥

- अन्वयार्थ – (सण्णि) संज्ञी जीव, (असण्णिचउक्के) असंज्ञीचतुष्क, (एगे) एकेन्द्रिय में (आबाधा) जघन्य आबाधा (अंतोमुहुत्तं) अन्तर्मुहूर्त है ।
- (जेट्ठे) उत्कृष्ट आबाधा संज्ञी जीवों में अपनी जघन्य आबाधा से (संखेज्जगुणा) संख्यातगुणी, असंज्ञीचतुष्क में (आवलिसंखं) जघन्य आबाधा से आवली के संख्यातवें भाग अधिक तथा एकेन्द्रिय में (असंखभागहियं) जघन्य आबाधा से आवलि के असंख्यातवें भाग अधिक जानना ॥146॥

www.JainKosh.org

आबाधा

कर्मबंध होने के पश्चात् जितने समय तक वह कर्म उदय या उदीरणारूप ना प्रवर्ते, उसे आबाधा कहते हैं ।

स्थिति के अनुसार आबाधा पड़ती है ।

अधिक स्थिति ➔ अधिक आबाधा

अल्प स्थिति ➔ अल्प आबाधा

आबाधा में कर्म की निषेक रचना नहीं होती है ।

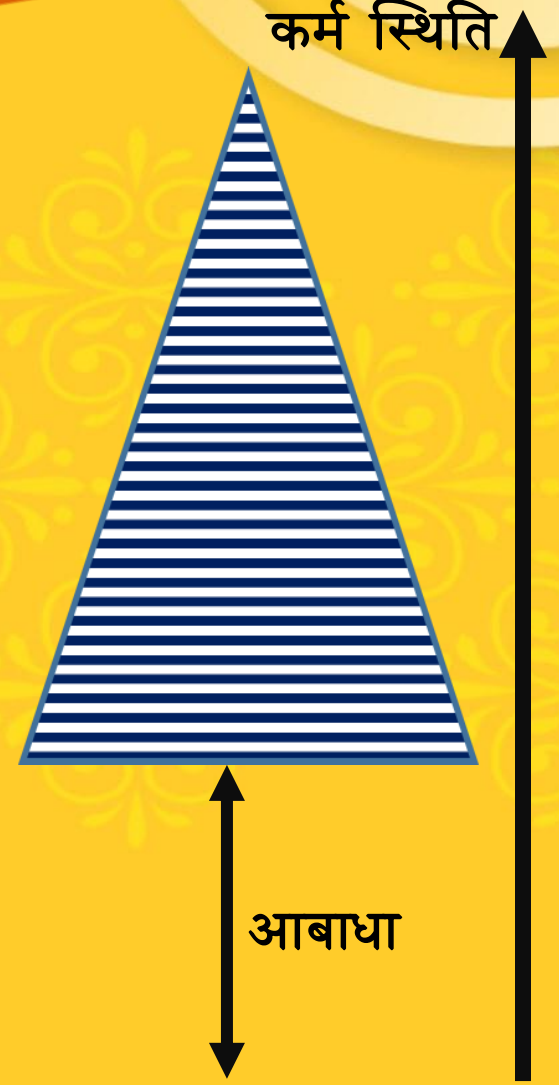

जघन्य-उत्कृष्ट आबाधा

	जघन्य	उत्कृष्ट
एकेन्द्रिय	अन्तर्मुहूर्त	जघन्य आबाधा + आवली/असंख्यात
द्वीन्द्रिय	अन्तर्मुहूर्त × 25	जघन्य आबाधा + आवली/संख्यात^4
त्रीन्द्रिय	अन्तर्मुहूर्त × 50	जघन्य आबाधा + आवली/संख्यात^3
चतुरिन्द्रिय	अन्तर्मुहूर्त × 100	जघन्य आबाधा + आवली/संख्यात^2
असंज्ञी पंचेन्द्रिय	अन्तर्मुहूर्त × 1000	जघन्य आबाधा + आवली/संख्यात
संज्ञी पंचेन्द्रिय	अन्तर्मुहूर्त × संख्यात	जघन्य आबाधा + (आवली × संख्यात)

आबाधा के प्रकार

- प्रकार याने भिन्न-भिन्न कितनी आबाधाएँ होती हैं ।
- उदाहरण के लिए जघन्य आबाधा 10 समय, उत्कृष्ट आबाधा 1000 समय ।
- तो कुल आबाधा के प्रकार कितने और कौन-से होंगे ?
- एक आबाधा — 10 समय वाली
- दूसरी आबाधा — 11 समय वाली
- तीसरी आबाधा — 12 समय वाली
- ऐसे एक-एक समय बढ़ाते हुए अंतिम आबाधा = 1000 समय वाली ।

www.JainKosh.org

इन सब प्रकारों को निकालने का सूत्र

$$\frac{\text{उत्कृष्ट} - \text{जघन्य}}{\text{वृद्धि का प्रमाण}} + 1$$

$$\frac{1000-10}{1} + 1 = 990 + 1 = 991$$

इसी प्रकार मूल में आबाधा के प्रकार निकाले जाते हैं ।

www.JainKosh.org

आबाधा के प्रकार

सूत्र = उत्कृष्ट आबाधा – जघन्य आबाधा + 1

जैसे (जघन्य आबाधा + $\frac{\text{आवली}}{\text{असंख्यात}}$) – जघन्य आबाधा + 1

जीवस्थान	आबाधा के प्रकार
एकेन्द्रिय	$\frac{\text{आवली}}{\text{असंख्यात}}$ + 1
द्वीन्द्रिय	$\frac{\text{आवली}}{\text{संख्यात}^4}$ + 1
त्रीन्द्रिय	$\frac{\text{आवली}}{\text{संख्यात}^3}$ + 1
चतुरिन्द्रिय	$\frac{\text{आबाधा}}{\text{संख्यात}^2}$ + 1
असंज्ञी पंचेन्द्रिय	$\frac{\text{आवली}}{\text{संख्यात}}$ + 1
संज्ञी पंचेन्द्रिय	(अंतर्मुहूर्त × संख्यात) + 1

जेट्ठाबाहोवट्टिय-जेट्ठं आबाहकंडयं तेण । आबाहवियप्पहदे-णेगूणेणूण जेट्ठमवरठिदी ॥147॥

- अन्वयार्थ – (जेट्ठाबाहोवट्टियजेट्ठं) उत्कृष्ट आबाधा से भाजित उत्कृष्ट स्थिति को (आबाहकंडयं) आबाधा काण्डक कहते हैं ।
- (तेण) उस आबाधाकांडक से (आबाहवियप्पहदेण) आबाधा विकल्प को (आबाधा भेदों को) गुणा करने पर जो प्राप्त हो उसमें से (एगूणेण) एक कम करके जो प्रमाण आवे उसे (ऊणजेट्ठं) उत्कृष्ट स्थिति में से घटाने पर (अवरठिदी) जघन्य स्थिति का प्रमाण आता है ॥147॥

www.JainKosh.org

आबाधाकांडक

जितने स्थिति के भेदों में एक प्रमाण वाली आबाधा होती है, उतने स्थिति के भेदों को आबाधाकाण्डक कहते हैं ।

www.JainKosh.org

- जैसे 4 स्थितियों के लिए समान ही आबाधा होगी, तो आबाधाकांडक का प्रमाण 4 होगा ।
- उदाहरण — उत्कृष्ट आबाधा = 16 समय, आबाधाकांडक = 4, उत्कृष्ट स्थिति = 64 समय, जघन्य स्थिति = 45 समय

ऐसा होने से यहाँ आबाधा के प्रकार 5 हुए ।

स्थिति-बंध	आबाधा	आबाधाकांडक
64	16	प्रथम
63	16	
62	16	
61	16	
60	15	द्वितीय
59	15	
58	15	
57	15	
56	14	तृतीय
55	14	
54	14	
53	14	
52-49	13	चतुर्थ
48-45	12	पंचम

www.JainKosh.org

	सूत्र	उदाहरण
आबाधाकांडक	$\frac{\text{उत्कृष्ट स्थिति}}{\text{उत्कृष्ट आबाधा}}$	$\frac{64}{16} = 4$
स्थितियों के प्रकार	आबाधाकांडक × आबाधा के प्रकार	$4 \times 5 = 20$
जघन्य स्थिति	उत्कृष्ट स्थिति − स्थितियों के प्रकार + 1	$64 - 20 + 1 = 45$

एकेन्द्रिय जीव संबंधी जघन्य स्थिति

आबाधाकांडक $\Rightarrow \frac{1 \text{ सागर}}{\text{अंतर्मुहूर्त}} = \frac{\text{संख्यात पल्य}}{\text{अंतर्मुहूर्त}} = \frac{\text{पल्य}}{\text{असंख्यात}}$

स्थितियों के प्रकार $\Rightarrow \frac{\text{संख्यात पल्य}}{\text{अंतर्मुहूर्त}} \times \frac{\text{आवली}}{\text{असंख्यात}} = \frac{\text{पल्य}}{\text{असंख्यात}}$

जघन्य स्थिति $\Rightarrow 1 \text{ सागर} - \left(\frac{\text{पल्य}}{\text{असंख्यात}} - 1\right) = 1 \text{ सागर} - \frac{\text{पल्य}}{\text{असंख्यात}}$

द्वीन्द्रिय संबंधी जघन्य स्थिति

आबाधाकांडक $\Rightarrow \frac{25 \text{ सागर}}{\text{अंतर्मुहूर्त}} = \frac{\text{संख्यात पल्य}}{\text{अंतर्मुहूर्त}} = \frac{\text{पल्य}}{\text{असंख्यात}}$

स्थितियों के प्रकार $\Rightarrow \frac{\text{पल्य}}{\text{असंख्यात}} \times \frac{\text{आवली}}{\text{संख्यात}^4} = \frac{\text{पल्य}}{\text{संख्यात}}$

जघन्य स्थिति $\Rightarrow 25 \text{ सागर} - \left(\frac{\text{पल्य}}{\text{संख्यात}} - 1\right) = 25 \text{ सागर} - \frac{\text{पल्य}}{\text{संख्यात}}$

इसी प्रकार शेष जीवों का भी जघन्य स्थिति-बंध निकाल लेना चाहिए ।

एकेन्द्रिय आदि में स्थिति के प्रकार

सूत्र	उत्कृष्ट स्थिति – जघन्य स्थिति + 1
उदाहरण	64 – 45 + 1 = 20
एकेन्द्रिय	1 सागर – (1 सागर – $\frac{\text{पल्य}}{\text{असंख्यात}}$) + 1 = 1 सागर – 1 सागर + $\frac{\text{पल्य}}{\text{असंख्यात}}$ + 1 = $\frac{\text{पल्य}}{\text{असंख्यात}}$
द्वीन्द्रिय	पल्य/संख्यात
त्रीन्द्रिय	पल्य/संख्यात
चतुरिन्द्रिय	पल्य/संख्यात
असंज्ञी पंचेन्द्रिय	पल्य/संख्यात

एकेन्द्रिय आदि के शेष कर्मों का जघन्य स्थिति-बंध

कर्म	एकेंद्रिय	द्वीन्द्रिय
चारित्र मोहनीय	$\frac{4}{7}$ सागर – $\frac{\text{पल्य}}{\text{असंख्यात}}$	$\frac{100}{7}$ सागर – $\frac{\text{पल्य}}{\text{संख्यात}}$
ज्ञानावरण-4	$\frac{3}{7}$ सागर – $\frac{\text{पल्य}}{\text{असंख्यात}}$	$\frac{75}{7}$ सागर – $\frac{\text{पल्य}}{\text{संख्यात}}$
नाम-गोत्र	$\frac{2}{7}$ सागर – $\frac{\text{पल्य}}{\text{असंख्यात}}$	$\frac{50}{7}$ सागर – $\frac{\text{पल्य}}{\text{संख्यात}}$

इसी प्रकार त्रीन्द्रिय आदि में भी जघन्य स्थिति-बंध निकालना चाहिए ।

www.JainKosh.org

बासूप-बासूअ-वरट्ठिदीओ, सूबाअ सूबाप-जहण्णकालो । बीबीवरो बीविजहण्णकालो, सेसाणमेवं वयणीयमेदं ॥148॥

- अन्वयार्थ – (बासूप बासूअ वरट्ठिदीओ) बादर पर्याप्त, सूक्ष्म पर्याप्त, बादर अपर्याप्त, सूक्ष्म अपर्याप्त एकेन्द्रियों की उत्कृष्ट स्थिति (सूबाअ सूबाप जहण्णकालो) सूक्ष्म अपर्याप्त, बादर अपर्याप्त, सूक्ष्म पर्याप्त, बादर पर्याप्त एकेन्द्रियों की जघन्य स्थिति (बीबीवरो) द्वीन्द्रिय पर्याप्त और द्वीन्द्रिय अपर्याप्त की उत्कृष्ट स्थिति (बीविजहण्णकालो) द्वीन्द्रिय अपर्याप्त, द्वीन्द्रिय पर्याप्त की जघन्य स्थिति जानना ।
- (एवं) इसी प्रकार (सेसाणं) शेष त्रीन्द्रिय से संज्ञी पंचेन्द्रियपर्यन्त स्थिति के चार-चार भेद (एदं वयणीयम्) कहना चाहिये ।
- सब मिलकर चौदह तरह के जीवों की अपेक्षा स्थिति-बंध के 8+4+4+4+4+4=28 भेद हुए ॥148॥

एक शलाका का प्रमाण 2 माना ।
इस प्रसंग में शलाका याने अनुपात (Ratio)

पद	अंतराल शलाका	स्थिति-भेद	स्थिति-बंध
बादर पर्याप्त एकेंद्रिय की उत्कृष्ट स्थिति	196	392	4602
सूक्ष्म पर्याप्त एकेंद्रिय की उत्कृष्ट स्थिति	28	56	4211
बादर अपर्याप्त एकेंद्रिय की उत्कृष्ट स्थिति	4	8	4155
सूक्ष्म अपर्याप्त एकेंद्रिय की उत्कृष्ट स्थिति	1	2	4147
सूक्ष्म अपर्याप्त एकेंद्रिय की जघन्य स्थिति	2	4	4145
बादर अपर्याप्त एकेंद्रिय की जघन्य स्थिति	14	28	4141
सूक्ष्म पर्याप्त एकेंद्रिय की जघन्य स्थिति	98	196	4113
बादर पर्याप्त एकेंद्रिय की जघन्य स्थिति			3917

अर्थात् इन जीवों में संभव स्थिति-बंध

जीवसमास	बंध के स्थान	संख्या
सूक्ष्म अपर्याप्त एकेन्द्रिय	4145 से 4147	3
बादर अपर्याप्त एकेन्द्रिय	4141 से 4155	15
सूक्ष्म पर्याप्त एकेन्द्रिय	4113 से 4211	99
बादर पर्याप्त एकेन्द्रिय	3917 से 4602	686

इसी प्रकार द्वीन्द्रिय में जानना चाहिए ।

पद	अंतराल शलाका	स्थिति-भेद	स्थिति-बंध
द्वीन्द्रिय पर्याप्त की उत्कृष्ट स्थिति	4	8	10000
द्वीन्द्रिय अपर्याप्त की उत्कृष्ट स्थिति	1	2	9993
द्वीन्द्रिय अपर्याप्त की जघन्य स्थिति	2	4	9991
द्वीन्द्रिय पर्याप्त की जघन्य स्थिति			9987

अर्थात् द्वीन्द्रिय अपर्याप्त के स्थिति-भेद मध्य के हैं तथा सबसे अल्प हैं ।
द्वीन्द्रिय पर्याप्त को स्थिति के सारे भेद उपलब्ध हैं ।
इसी प्रकार त्रीन्द्रिय से असंज्ञी पंचेन्द्रिय तक में भी समझना चाहिए ।

आबाधा के भेदों का अल्प-बहुत्व

जिस प्रकार से अपर्याप्त, पर्याप्त जीवों के स्थिति-भेदों का अल्प-बहुत्व है उसी प्रकार से उनके आबाधा के भेदों का भी अल्प-बहुत्व जानना चाहिए ।

स्थिति के भेद कम हैं, तो आबाधा के भेद भी कम होंगे ।

स्थिति के भेद अधिक हैं, तो आबाधा के भेद भी अधिक होंगे ।

मज्झे थोवसलागा, हेट्ठा उवरिं च संखगुणिदकमा । सव्वजुदी संखगुणा, हेट्ठुवरिं संखगुणमसण्णित्ति ॥149॥

- अन्वयार्थ - (मज्झे) मध्य भाग में (थोवसलागा) सब से कम शलाका (संख्या) हैं ।
- (हेट्ठा उवरिं च) मध्यभाग से नीचे की और ऊपर की शलाका (संखगुणिदकमा) क्रम से संख्यातगुणी हैं ।
- पुनः (सव्वजुदी) इन तीनों को जोड़कर जो लब्ध आता है उससे (हेट्ठुवरिं) नीचे और ऊपर क्रम से (संखगुणा) संख्यात गुणी हैं – इस प्रकार (संखगुणमसण्णित्ति) असंज्ञी पंचेन्द्रिय पर्यन्त नीचे ऊपर संख्यातगुणा जानना ॥149॥

www.JainKosh.org

अंतराल की शलाकाएँ

- एकेंद्रिय के स्थिति-भेदों के 8 स्थान हैं तो अन्तराल होंगे 7 ।
- इनमें सर्व मध्य में सबसे अल्प शलाका है ।
- उसे माना — 1
- नीचे संख्यात गुणित है, तो 1 × 2 = 2
- ऊपर इससे संख्यात गुणित है, तो 2 × 2 = 4
- अब इन सबका जोड़ (1+2+4) = 7
- नीचे इससे भी संख्यात गुणी शलाका है, तो 7 × 2 = 14
- ऊपर इससे भी संख्यात गुणी शलाका है, तो 14 × 2 = 28
- अब इन सबका जोड़ (1+2+4+14+28) = 49
- नीचे इससे संख्यात गुणी शलाका है, तो 49 × 2 = 98
- ऊपर इससे संख्यात गुणी शलाका है, तो 98 × 2 = 196
- इस प्रकार सर्व अंतराल की शलाकाएँ प्राप्त होती हैं ।

www.JainKosh.org

स्थिति-भेद निकालने की विधि

- सर्व स्थिति के भेदों को कुल शलाकाओं से विभाजित करो ।
- जो लब्ध प्राप्त हुआ, वह 1 शलाका के लिए स्थिति के भेदों का प्रमाण है ।
- जहाँ जितनी शलाकाएँ हैं, उसे एक शलाका की कीमत से गुणा करने पर वहाँ उतने स्थिति के भेद होंगे ।
- जैसे एकेंद्रिय की सर्व शलाकाएँ = 343
- एकेंद्रिय के सर्व स्थिति-भेद = 686 (3917 से 4602 तक)
- तो एक शलाका का प्रमाण = $\frac{\text{सर्व स्थिति–भेद}}{\text{सर्व शलाकाएँ}} = \frac{686}{343} = 2$
- अंतराल में जहाँ जितनी शलाकाएँ हैं, वहाँ उतने स्थिति के भेद पाए जायेंगे ।

www.JainKosh.org

इसी प्रकार द्वीन्द्रिय आदि शेष भेदों में भी शलाकाएँ और स्थिति के भेद निकाल लेना चाहिए ।

सण्णिस्स दु हेट्ठादो, ठिदिठाणं संखगुणिदमुवरुवरिं ।
ठिदिआयामो वि तहा, सगठिदिठाणं व आबाहा ॥150॥

- अन्वयार्थ – (सण्णिस्स) संज्ञी पंचेन्द्रिय के चार भेदों में (हेट्ठादो) नीचे से लेकर (उवरुवरिं) ऊपर-ऊपर (ठिदिठाणं) स्थितिस्थान (संखगुणिदं) संख्यातगुणित हैं ।
- (ठिदिआयामो वि) स्थिति आयाम अर्थात् समयों का प्रमाण भी संख्यातगुणा (तहा) तथा (आबाहा) आबाधा काल का प्रमाण (सगठिदिठाणं व) अपने स्थिति स्थानों के समान ही समझना चाहिए ॥150॥

संज्ञी पंचेन्द्रिय में स्थिति-भेद

पद	अंतराल शलाका	स्थिति-भेद	स्थिति-बंध
संज्ञी पंचेन्द्रिय पर्याप्त की उत्कृष्ट स्थिति	20	56000	1,71,001
संज्ञी पंचेन्द्रिय अपर्याप्त की उत्कृष्ट स्थिति	4	11200	1,15,002
संज्ञी पंचेन्द्रिय अपर्याप्त की जघन्य स्थिति	1	2800	1,03,802
संज्ञी पंचेन्द्रिय पर्याप्त की जघन्य स्थिति			1,01,002

www.jainkosh.org

संज्ञी पंचेन्द्रिय अपर्याप्तकों में स्थिति-भेद

संज्ञी पंचेन्द्रिय में अपर्याप्तकों के स्थिति के विकल्प बहुत हैं

अतः यहाँ शलाकाओं का प्रमाण बदल जाता है ।

तथापि अपर्याप्त के स्थिति-भेदों से पर्याप्त के स्थिति-भेद संख्यात गुणे हैं ।

www.JainKosh.org

सत्तरसपंचतित्थाहाराणं सुहुमबादरोऽपुव्वो ।
छव्वेगुव्वमसण्णी, जहण्णमाऊण सण्णी वा ॥151॥

- अन्वयार्थ – (सत्तरसपंचतित्थाहाराणं) 17 प्रकृतियाँ (दसवें गुणस्थान की बंध प्रकृतियाँ), पाँच प्रकृतियाँ (पुंवेद, 4 संज्वलन कषाय) और तीर्थंकर, आहारक-द्विक – इन प्रकृतियों का (जहण्णं) जघन्य स्थिति-बंध (सुहुमबादरोऽपुव्वो) क्रम से सूक्ष्म-सांपरायवर्ती, बादर अनिवृत्तिकरण और अपूर्वकरण गुणस्थानवर्ती करता है।
- (छव्वेगुव्वमसण्णी) वैक्रियिक षट्क का जघन्य स्थिति-बंध असंज्ञी पंचेन्द्रिय जीव करता है ।
- (आऊण) आयु कर्मों का जघन्य स्थिति-बंध (सण्णी वा) संज्ञी अथवा असंज्ञी करता है ॥151॥

www.JainKosh.org

जघन्य स्थिति-बंध के स्वामी

प्रकृतियाँ	स्वामी
सूक्ष्म सांपराय में बंधने वाली प्रकृतियाँ — 17 ज्ञानावरण - 5, दर्शनावरण - 4, अंतराय - 5 उच्च गोत्र, यश, साता वेदनीय	सूक्ष्म सांपराय क्षपक
पुरुषवेद, 4 संज्वलन	अनिवृत्तिकरण क्षपक
तीर्थंकर, आहारक-2	अपूर्वकरण क्षपक
वैक्रियिक-6	असंज्ञी पंचेन्द्रिय
4 आयु	संज्ञी, असंज्ञी
शेष 85 प्रकृतियाँ	बादर एकेन्द्रिय पर्याप्त

अजहण्णट्ठिदिबंधो, चदुव्विहो सत्तमूलपयडीणं ।
सेसतिये दुवियप्पो, आउचउक्केवि दुवियप्पो ॥152॥

- अन्वयार्थ – (सत्तमूलपयडीणं) सात मूल प्रकृतियों का (अजहण्णट्ठिदिबंधो) अजघन्य स्थिति-बंध (चदुव्विहो) चार प्रकार का अर्थात् सादि, अनादि, ध्रुव और अध्रुव है और
- (सेसतिये) शेष तीन प्रकार का अर्थात् जघन्य, उत्कृष्ट और अनुत्कृष्ट स्थिति-बंध (दुवियप्पो) दो प्रकार का अर्थात् सादि और अध्रुव होता है ।
- (आउचउक्केवि) आयुकर्म का चारों ही प्रकार का स्थिति-बंध (दुवियप्पो) सादि और अध्रुव भेद से दो ही प्रकार का है ॥152॥

www.JainKosh.org

जघन्य आदि स्थिति-बंध के प्रकार

	अजघन्य	जघन्य	उत्कृष्ट	अनुत्कृष्ट
ज्ञानावरण आदि 7	चारों भेद	सादि, अध्रुव	सादि, अध्रुव	सादि, अध्रुव
आयु	सादि, अध्रुव	सादि, अध्रुव	सादि, अध्रुव	सादि, अध्रुव

www.JainKosh.org

ज्ञानावरण के अजघन्य के 4 प्रकार

ज्ञानावरण का जघन्य बंध क्षपक श्रेणी में ही होता है, अत: उसके पहले अजघन्य बंध अनादि-रूप ही है ।

जब क्षपक श्रेणी में अंतिम समय में जघन्य बंध हुआ, तब उसके पहले अजघन्य बंध हो रहा था, जिसका अभाव हुआ । जब अभाव हुआ तो उसे अध्रुव कहते हैं ।

उपशम श्रेणी प्राप्त करने पर ज्ञानावरण का बंध का अभाव हुआ, पुन: नीचे 10वें अथवा मरण की अपेक्षा चौथे गुणस्थान की प्राप्ति होने पर ज्ञानावरण का अजघन्य बंध प्रारंभ हुआ । यह ज्ञानावरण का अजघन्य बंध का सादि प्रकार हुआ ।

अभव्य जीव के कभी अजघन्य बंध का अभाव नहीं होता, अत: ज्ञानावरण के अजघन्य का बंध ध्रुव भी है ।

ज्ञानावरण का अजघन्य स्थिति-बंध

www.JainKosh.org

ज्ञानावरण का जघन्य बंध – सादि, अध्रुव

ज्ञानावरण का जघन्य बंध क्षपक श्रेणी के अंतिम स्थिति-बंध में होता है । यह सादि बंध कहलाता है ।

12वें गुणस्थान के प्रथम समय में ज्ञानावरण का जघन्य बंध भी नहीं हैं । 10वें गुणस्थान के अंतिम समय में वह व्युच्छिन्न हो गया । यह ज्ञानावरण के जघन्य बंध का अध्रुवपना हुआ ।

इसी प्रकार शेष कर्मों में भी लगाना चाहिए ।

www.JainKosh.org

ज्ञानावरण का जघन्य स्थिति-बंध

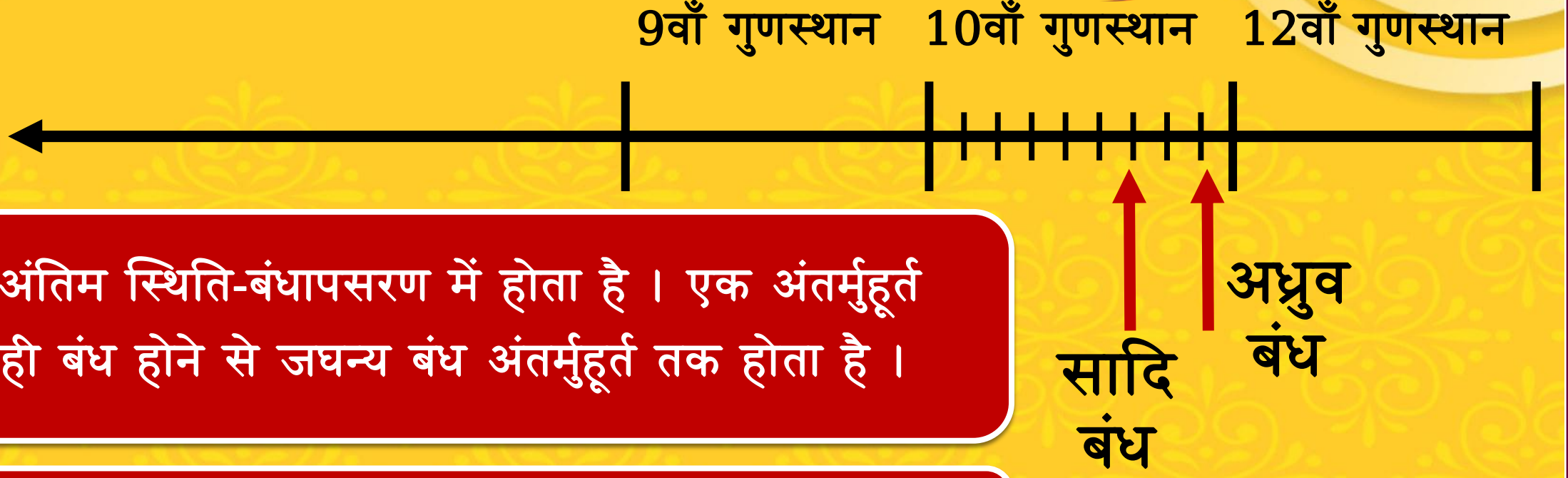

जघन्य बंध अंतिम स्थिति-बंधापसरण में होता है । एक अंतर्मुहूर्त तक समान ही बंध होने से जघन्य बंध अंतर्मुहूर्त तक होता है ।

जब बंध प्रारंभ होता है, वह जघन्य बंध का सादि-बंध कहलाता है ।

क्षपक के अंतिम समय के बंध को अध्रुव बंध कहते हैं क्योंकि यहाँ यह व्युच्छिन्न हो जाता है ।

प्रश्नः वेदनीय के अजघन्य
स्थिति-बंध में चारों प्रकार
किस प्रकार कहे हैं?
विचारिये !

आयु कर्म

सर्वत्र आयुकर्म किसी विशिष्ट समय बंधता है, अतः सादि बंध है ।

तथा बंध होकर रुक जाता है, अतः अध्रुव है ।

आयु कर्म के जघन्य आदि चारों ही प्रकारों में 2 ही भंग बनते हैं ।

www.JainKosh.org

संजलणसुहुमचोद्दस-घादीणं चदुविधो दु अजह्ण्णो ।
सेसतिया पुण दुविहा, सेसाणं चदुविधा वि दुधा ॥153॥

- अन्वयार्थ - (संजलणसुहुमचोद्दसघादीणं) संज्वलन चार कषाय और सूक्ष्म-सांपराय गुणस्थान में व्युच्छिन्न होने वाली चौदह घातिकर्म प्रकृतियों का (अजह्ण्णो) अजघन्य स्थिति-बन्ध (चदुविधो दु) सादि, अनादि, ध्रुव, अध्रुव चारों प्रकार का है ।
- (सेसतिया) शेष जघन्यादि तीन भेदों के (दुविहा) सादि व अध्रुवरूप दो प्रकार हैं ।
- (सेसाणं) शेष प्रकृतियों का (चदुविधा वि) चारों प्रकार का भी स्थिति-बंध (दुधा) सादि और अध्रुवरूप दो प्रकार है ॥153॥

www.JainKosh.org

उत्तर प्रकृतियों में जघन्य आदि स्थिति-बंध

	अजघन्य	जघन्य	उत्कृष्ट	अनुत्कृष्ट
संज्वलन-4	चारों	सादि, अध्रुव	सादि, अध्रुव	सादि, अध्रुव
ज्ञानावरण-5	चारों	सादि, अध्रुव	सादि, अध्रुव	सादि, अध्रुव
दर्शनावरण-4	चारों	सादि, अध्रुव	सादि, अध्रुव	सादि, अध्रुव
अंतराय-5	चारों	सादि, अध्रुव	सादि, अध्रुव	सादि, अध्रुव
शेष 102 प्रकृतियाँ	सादि, अध्रुव	सादि, अध्रुव	सादि, अध्रुव	सादि, अध्रुव

उत्तर प्रकृतियों के अजघन्य-बंध संबंधी नियम

जिन प्रकृतियों का जघन्य बंध गुणस्थान विशेष में होता है,

जिनकी प्रतिपक्षी प्रकृति नहीं है,

जो ध्रुव-बंधी है, ऐसी प्रकृतियों का अजघन्य बंध चारों प्रकार का होता है ।

चूंकि ये 18 प्रकृतियाँ उपर्युक्त नियमों में हैं, अत: इनका अजघन्य बंध 4 प्रकार का है ।

शेष प्रकृतियाँ इस प्रकार की नहीं हैं, अत: उनका अजघन्य बंध 2 प्रकार का ही है।

www.JainKosh.org

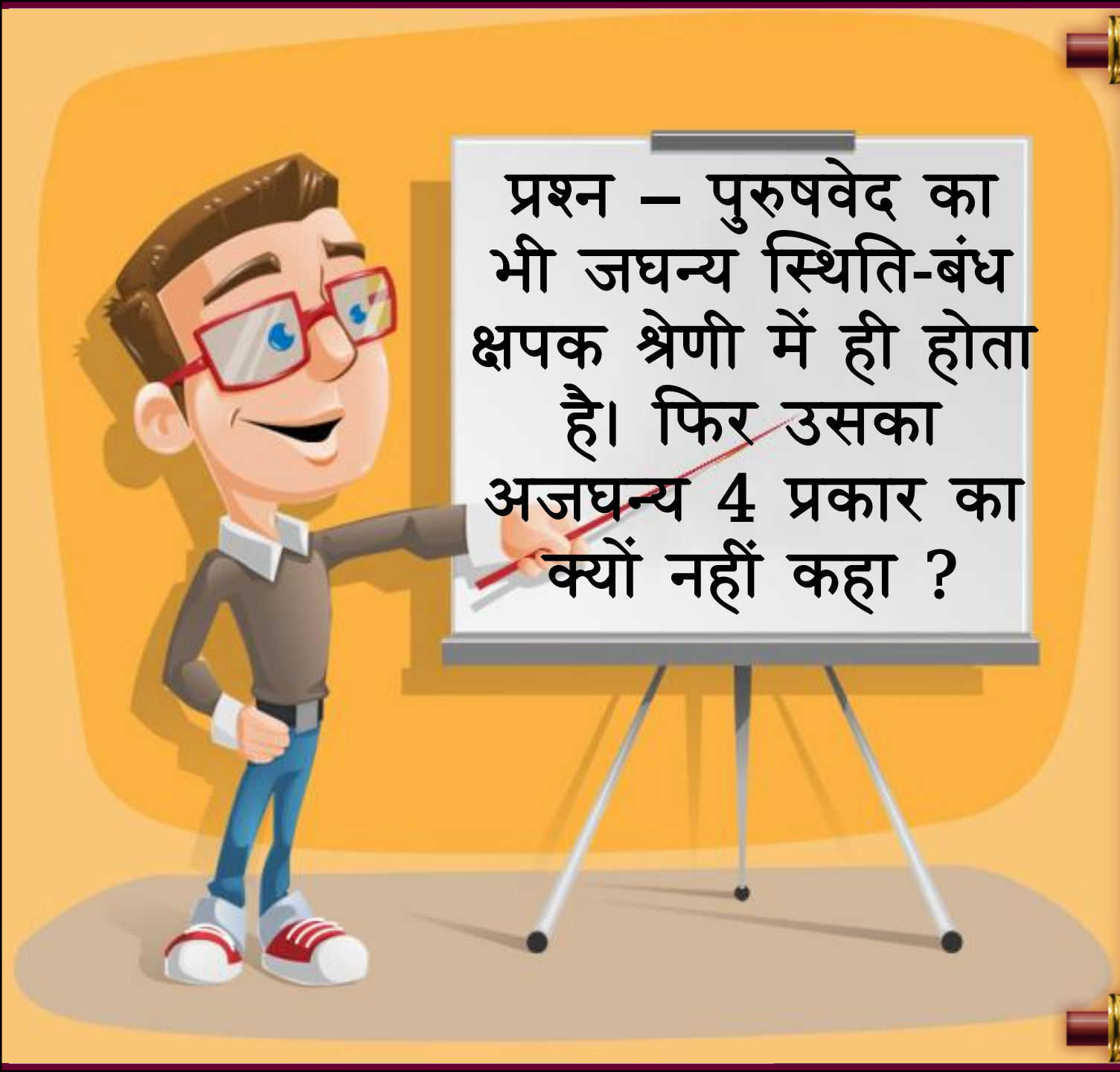

प्रश्न – पुरुषवेद का भी जघन्य स्थिति-बंध क्षपक श्रेणी में ही होता है। फिर उसका अजघन्य 4 प्रकार का क्यों नहीं कहा ?

◎उत्तर – क्योंकि पुरुषवेद ध्रुवबंधी नहीं है, इसके प्रतिपक्षी कर्म स्त्री व नपुंसक वेद हैं । अतः इसका अजघन्य बंध सादि, अध्रुव ही होता है ।

उत्तर प्रकृतियों के अनुत्कृष्ट-बंध संबंधी नियम

जिनका उत्कृष्ट स्थिति-बंध गुणस्थान विशेष में होता है,

जिनकी प्रतिपक्षी प्रकृति नहीं है, जो ध्रुव-बंधी है,

ऐसी प्रकृतियों का अनुत्कृष्ट बंध चार प्रकार का होता है ।

चूंकि ऐसी एक भी प्रकृति नहीं है, इसलिए सारी प्रकृतियों का अनुत्कृष्ट बंध सादि और अध्रुव ही है।

जघन्य और उत्कृष्ट स्थिति-बंध तो कभी प्रारंभ होकर नष्ट होते ही हैं, अतः इनका सादि और अध्रुव ही बंध है ।

www.JainKosh.org

सव्वाओ दु ठिदीओ, सुहासुहाणं पि होंति असुहाओ ।
माणुसतिरिक्खदेवाउगं च मोत्तूण सेसाणं ॥154॥

◎अन्वयार्थ – (माणुसतिरिक्खदेवाउगं च मोत्तूण) मनुष्यायु, तिर्यञ्चायु और देवायु को छोड़कर (सेसाणं) शेष सर्व (सुहासुहाणं पि) शुभ और अशुभ प्रकृतियों की (सव्वाओ दु ठिदीओ) सर्व स्थितियाँ (असुहाओ) अशुभरूप (होंति) होती हैं ॥154॥

osh.or

स्थिति

प्रकृति	प्रकार
तिर्यंचायु, मनुष्यायु, देवायु की स्थिति	शुभ
शेष पुण्य प्रकृतियों की स्थिति	अशुभ
पाप प्रकृतियों की स्थिति	अशुभ

क्योंकि स्थिति संसार का ही कारण है ।

इसलिए संक्लेश से 117 प्रकृतियों का स्थिति-बंध अधिक होता है, विशुद्धि से स्थिति-बंध कम होता है ।

कम्मसरूवेणागय-दव्वं ण य एदि उदयरूवेण ।
रूवेणुदीरणस्स व, आबाहा जाव ताव हवे ॥155॥

◎अन्वयार्थ - (कम्मसरूवेणागयदव्वं) कर्मस्वरूप से आया हुआ पुद्गल द्रव्य (जाव) जब तक (उदयरूवेण) उदयरूप से (य) अथवा (उदीरणस्स रूवेण) उदीरणा के रूप से (ण य एदि) नहीं आता (ताव) तब तक का काल (आबाहा) आबाधा (हवे) है ॥155॥

www.JainKosh.org

आबाधा

बन्धरूप से अवस्थित

पौद्गलिक कर्म

जब तक उदयरूप या उदीरणारूप नहीं होते

उतने काल को आबाधा कहते हैं ।

बाधा (कर्म) का अभाव = अबाधा, आबाधा

उदयं पडि सत्तण्हं, आबाहा कोडकोडि उवहीणं ।
वाससयं तप्पडिभागेण य सेसट्ठिदीणं च ॥156॥

- अन्वयार्थ – (सत्तण्हं) आयु के बिना सात कर्मों की (उदयं पडि) उदय की अपेक्षा (कोडकोडि उवहीणं) एक कोड़ाकोड़ी सागर प्रमाण स्थिति की (आबाहा) आबाधा (वाससयं) एक सौ वर्ष है ।
- (तप्पडिभागेण य) उसके प्रतिभाग से (सेसट्ठिदीणं च) शेष स्थितियों की आबाधा जानना ॥156॥

www.JainKosh.org

उदय की अपेक्षा मूल प्रकृतियों की आबाधा

- 1 कोड़ाकोड़ी सागर की आबाधा 100 वर्ष होती है ।
- इसी के अनुसार त्रैराशिक से सबकी आबाधा निकाल लेना चाहिए ।
- जैसे 1 कोड़ाकोड़ी सागर की आबाधा 100 वर्ष होती है,
- तो 70 कोड़ाकोड़ी सागर की आबाधा कितनी होगी?

$$= \frac{100 \text{ वर्ष}}{1 \text{ कोड़ाकोड़ी सागर}} \times 70 \text{ कोड़ाकोड़ी सागर}$$

$$= 7000 \text{ वर्ष}$$

www.JainKosh.org

उदय की अपेक्षा मूल प्रकृतियों की आबाधा

कर्म	उत्कृष्ट आबाधा
दर्शन मोहनीय	7000 वर्ष
चारित्र मोहनीय	4000 वर्ष
ज्ञानावरण-4	3000 वर्ष
नाम-गोत्र	2000 वर्ष

इसी प्रकार से मध्य स्थितियों की आबाधा भी निकालना चाहिए ।

www.JainKosh.org

1 कोड़ाकोड़ी सागर से कम बंध होने पर कितनी आबाधा होगी ?

अंतोकोडाकोडि-ट्ठिदिस्स अंतोमुहुत्तमाबाहा ।
संखेज्जगुणविहीणं, सव्वजहण्णट्ठिदिस्स हवे ॥157॥

- अन्वयार्थ – (अंतोकोडाकोडिट्ठिदिस्स) अन्त:कोड़ाकोड़ी सागर प्रमाण स्थिति की (आबाहा) आबाधा (अंतोमुहुत्तं) अन्तर्मुहूर्त है
- और (सव्वजहण्णट्ठिदिस्स) सर्व कर्मों की जघन्य स्थिति की आबाधा (संखेज्जगुणविहीणं) उससे संख्यातगुणाहीन (हवे) है ॥157॥

www.JainKosh.org

अंत:कोड़ा कोड़ी सागर स्थिति की आबाधा अंतर्मुहूर्त है ।

- 1 मुहूर्त प्रमाण आबाधा किस स्थिति की होगी, यह निकालते हैं—
- 1 दिन के मुहूर्त = 30
- 1 वर्ष के मुहूर्त = 360 × 30 = 10800
- 100 वर्ष के मुहूर्त = 100 × 10800 = 10,80,000 मुहूर्त
- 10,80,000 मुहूर्त आबाधा है 1 कोड़ाकोड़ी सागर की ।
- तो 1 मुहूर्त आबाधा कितनी स्थिति की होगी ?
- $\frac{1 \text{ कोड़ाकोड़ी सागर}}{10,80,000 \text{ मुहूर्त}} \times 1 \text{ मुहूर्त}$
- $\frac{10^{14} \text{ सागर}}{10,80,000} = 9,25,92,592 \frac{64}{108}$ सागर

www.JainKosh.org

1 सागर की आबाधा कितनी ?

- 100 वर्ष के मुहूर्त = 1080000
- 1 मुहूर्त के उच्छ्वास = 3773
- 100 वर्ष के उच्छ्वास = 1080000 × 3773 = 4074840000
- 1 कोड़ाकोड़ी सागर की आबाधा 4074840000 उच्छ्वास है,
- तो 1 सागर की आबाधा कितनी उच्छ्वास होगी ?
- $\frac{4074840000}{1 \text{ कोड़ाकोड़ी सागर}} \times 1 \text{ सागर}$
- $= \frac{4074840000}{10^{14}} = \frac{1}{\text{संख्यात}}$ उच्छ्वास
- अर्थात् एक उच्छ्वास का भी संख्यातवाँ भाग 1 सागर की आबाधा है
- इसी प्रकार त्रैराशिक से सब स्थितियों की आबाधा निकालना चाहिए ।

www.JainKosh.org

पुव्वाणं कोडितिभागादासंखेप अद्धवो त्ति हवे ।
आउस्स य आबाहा, ण ट्ठिदिपडिभागमाउस्स ॥158॥

- अन्वयार्थ - (आउस्स य आबाहा) आयुकर्म की आबाधा (पुव्वाणं कोडितिभागादासंखेप अद्धवो त्ति) एक कोटि पूर्व वर्ष के त्रिभाग से लेकर असंक्षेपाद्धा काल तक (हवे) है ।
- (आउस्स) आयुकर्म की आबाधा (ट्ठिदिपडिभागं) स्थिति के प्रतिभाग के अनुसार (ण) नहीं है ॥158॥

www.JainKosh.org

आयु कर्म की आबाधा

उत्कृष्ट

कोटि पूर्व $\times \frac{1}{3}$

जब कोई कर्मभूमिया 1 कोटि पूर्व की आयु वाला

मनुष्य या तिर्यंच

आयु का 2/3 बीतने पर

अगली आयु का बंध करता है

तब उसकी शेष बची 1/3 कोटि पूर्व आयु

अगली आयु हेतु आबाधा रहती है ।

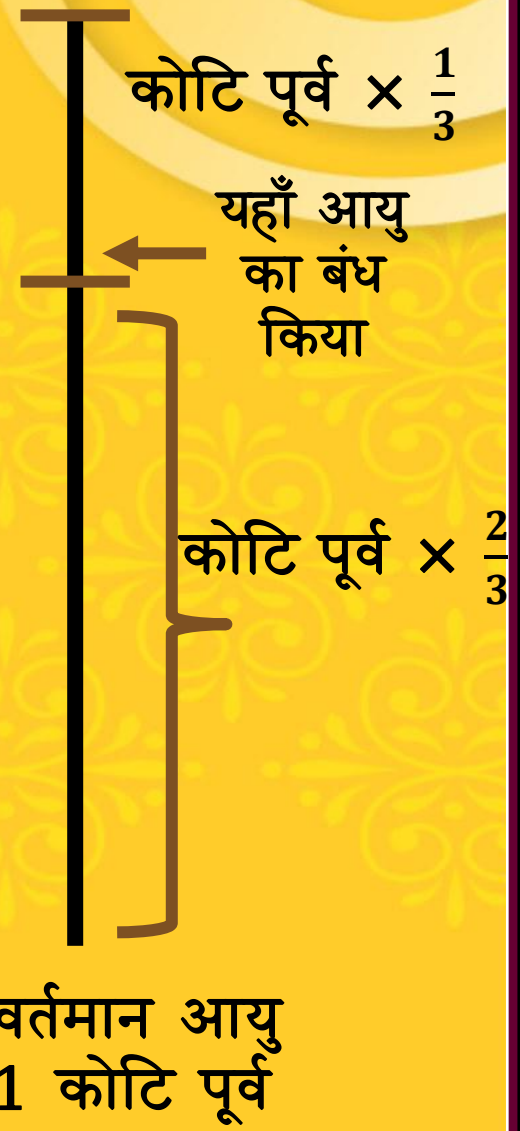

आयु कर्म की आबाधा

संक्षेप = अल्प / थोड़ा; अद्धा = काल;
अ = नहीं है ।

जिससे और अल्प काल आयुकर्म की आबाधा का नहीं पाया जाता है, उसे असंक्षेपाद्धा कहते हैं ।

जब किसी अपकर्ष काल में आयु का बंध नहीं होता, तब मरण के अंतर्मुहूर्त पूर्व आयु का बंध होता है । उस समय आयु की जघन्य आबाधा होती है ।

जघन्य

असंक्षेपाद्धा (आवली / असंख्यात) अथवा अंतर्मुहूर्त

प्रश्न – देव, नारकी की आयु 33 सागर होती है । उनकी आयु का 2/3 बीतने पर आयु बंध कराने पर अधिक आबाधा प्राप्त होगी ?

उत्तर– देव, नारकी को अन्त के 6 माह में ही अगली आयु का बंध होता है । इसलिए उनको उत्कृष्ट आबाधा 6 माह ही होती है ।

इसी प्रकार भोगभूमिया मनुष्य, तिर्यंच की उत्कृष्ट आयु यद्यपि 3 पल्य की है, तथापि उनको अगली आयु का बंध 9 मास पूर्व ही होता है, अतः उनकी भी आबाधा 9 मास से अधिक नहीं होती ।

इसलिए आयु की उत्कृष्ट आबाधा 1 कोटि पूर्व × 1/3 प्रमाण ही है ।

आयु कर्म की आबाधा प्रतिभाग अनुसार नहीं निकाली जाती है ।

आयु कर्म की आबाधा जितनी भुज्यमान आयु शेष है, उतनी होती है ।

www.jainkosh.org

आवलियं आबाहोदीरणमासेज्ज सत्तकम्माणं ।
परभवियआउगस्स य, उदीरणा णत्थि णियमेण ॥159॥

- अन्वयार्थ – (उदीरणमासेज्ज) उदीरणा का आश्रय लेकर (सत्तकम्माणं) आयु के बिना सात कर्मों की (आबाहा) आबाधा (आवलियं) आवलि प्रमाण है ।
- (य) और (परभवियआउगस्स य) परभवसंबंधी आयुकर्म की (णियमेण) नियम से (उदीरणा) उदीरणा (णत्थि) नहीं होती ॥159॥

www.JainKosh.org

उदीरणा की अपेक्षा आबाधा

अपक्व कर्म को उदयावली में प्राप्त कराने को उदीरणा कहते हैं ।

कर्म	आबाधा
7 कर्म	1 आवली
आयु कर्म	×

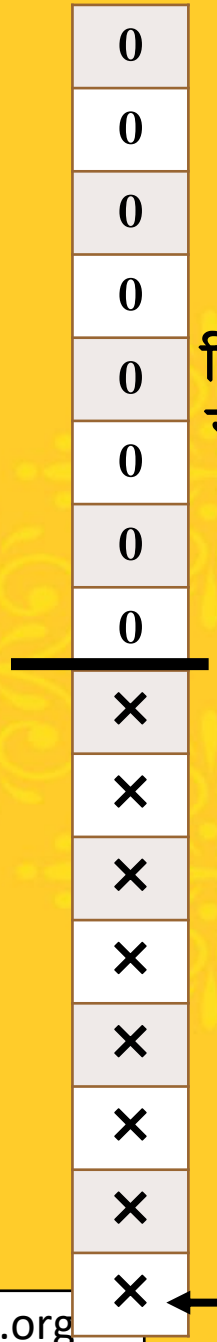

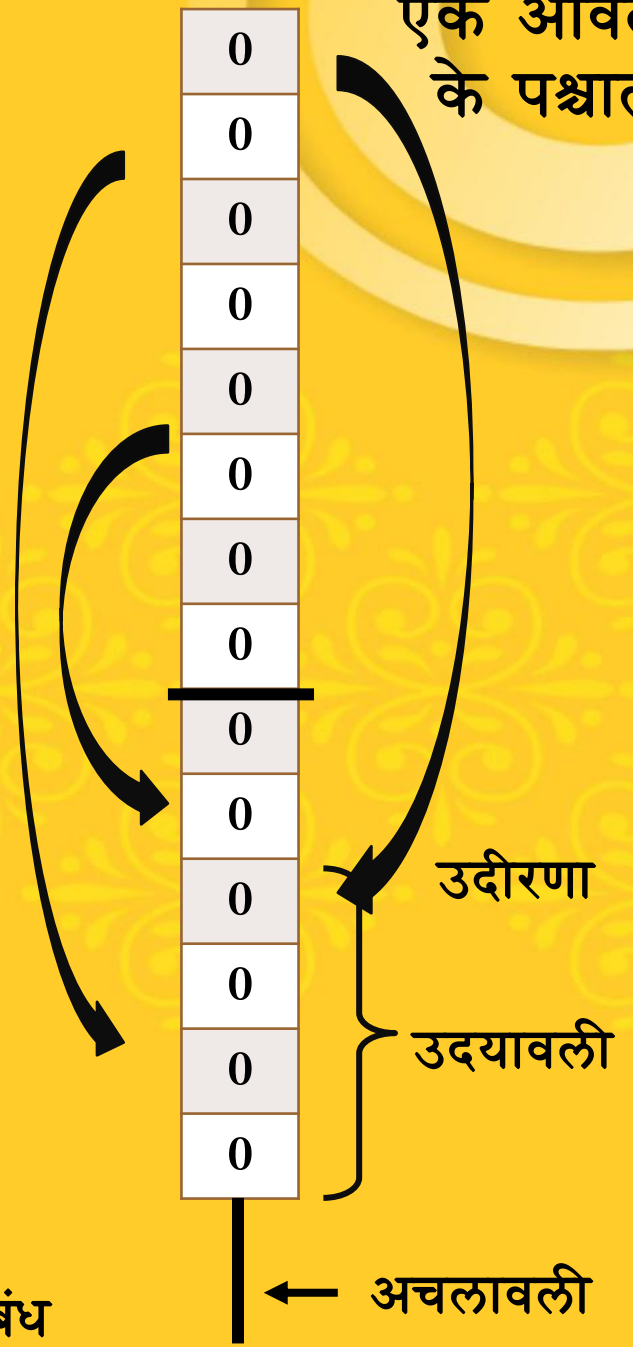

inKosh.org

1 आवली आबाधा क्यों ?

क्योंकि बंध समय से 1 आवली प्रमाण काल तक बंधा कर्म अचल रहता है ।

याने उसका उदय, उदीरणा, संक्रमण, अपकर्षण आदि कुछ भी नहीं हो सकता है ।

इस 1 आवली को ही अचलावली कहते हैं ।

इसके पश्चात् ही उदीरणा संभव है ।

अतः उदीरणा की अपेक्षा 1 आवली काल आबाधा कही है ।

आयु कर्म की उदीरणा की अपेक्षा आबाधा

आयु कर्म का बंध हो जाने पर अगली आयु की उदीरणा नहीं होती है । इसलिए उदीरणा की अपेक्षा आयु की कोई आबाधा नहीं है ।

इसी से यह फलित होता है कि आयु बंध जाने के बाद जीव का अकालमरण संभव नहीं है ।

www.JainKosh.org

आबाहूणियकम्मट्ठिदी णिसेगो दु सत्तकम्माणं ।
आउस्स णिसेगो पुण, सगट्ठिदि होदि णियमेण ॥160॥

- अन्वयार्थ – (आबाहूणिय कम्मट्ठिदी) आबाधा से कम कर्मस्थिति प्रमाण (सत्तकम्माणं) आयु के बिना सात कर्मों के (णिसेगो दु) निषेक हैं ।
- (पुण आउस्स) परन्तु आयुकर्म के (णिसेगो) निषेक (सगट्ठिदी) अपनी स्थितिप्रमाण ही (णियमेण) नियम से (होदि) होते हैं, ऐसा जानना ॥160॥

www.JainKosh.org

निषेक

प्रतिसमय

जितने कर्मपरमाणु

खिरते हैं,

उन कर्मपरमाणुओं के समूह को

निषेक कहते हैं ।

7 कर्मों के निषेक

- कर्म-स्थिति – आबाधाकाल

आयुकर्म के निषेक

- कर्म-स्थिति प्रमाण

www.JainKosh.org

जैसे - किसी ने ज्ञानावरण कर्म 1 कोड़ाकोड़ी सागर का बांधा, तो इसके निषेक कितने बनेंगे ?

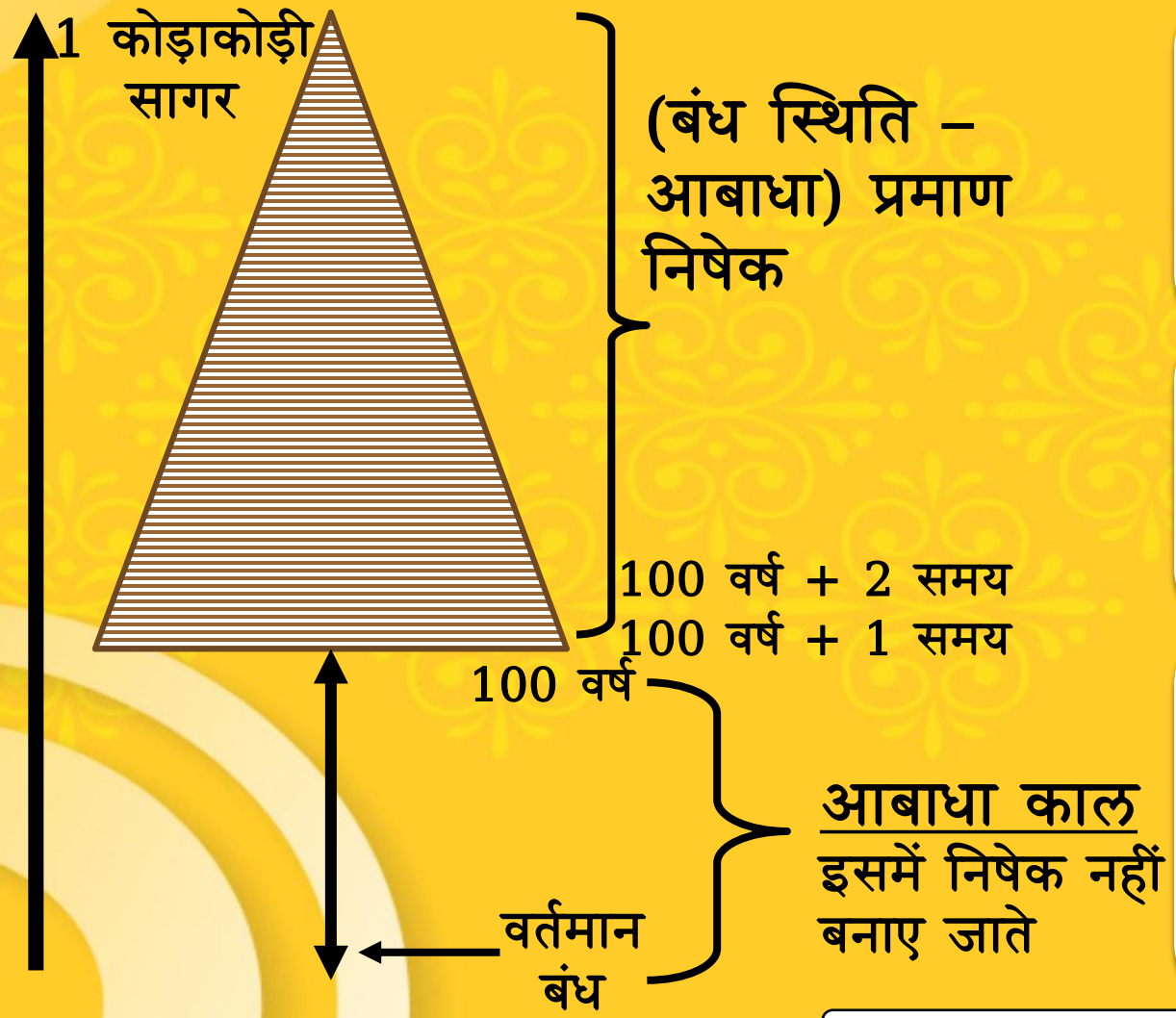

यहाँ वर्तमान बंध समय से 100 वर्ष प्रमाण तो आबाधा है ।

आबाधा में निषेक नहीं बनाए जाते ।

इसके अनंतर स्थिति वाले निषेक से (1 कोड़ाकोड़ी सागर – 100 वर्ष) प्रमाण तक निषेक बनेंगे ।

www.JainKosh.org

यह 1 समयप्रबद्ध की अपेक्षा से कहा है ।

जहाँ वर्तमान समयप्रबद्ध की आबाधा है, वहाँ पहले के बद्ध कर्म सत्ता में हैं ही ।

अतः वह स्थान पूर्णतया खाली नहीं है ।

वर्तमान के समयप्रबद्ध में से वहाँ निषेक नहीं दिए हैं, पूर्व के तो हैं ही ।

www.JainKosh.org

आयु कर्म की निषेक रचना

7 कर्मों की आबाधा स्थिति-बंध में शामिल होती है ।

परन्तु आयु कर्म की आबाधा स्थिति-बंध में शामिल नहीं होती ।

अतः आयु कर्म की जितनी स्थिति बांधी है, उतने पूरे निषेक बनाए जाते हैं ।

www.

आबाहं बोलाविय, पढमणिसेगम्मि देय बहुगं तु ।
तत्तो विसेसहीणं, विदियस्सादिमणिसेगोत्ति ॥161॥

- अन्वयार्थ - (आबाहं बोलाविय) आबाधा का उल्लंघन करके (पढमणिसेगम्मि) प्रथम निषेक में (बहुगं) बहुत द्रव्य (देइ) दिया जाता है ।
- (तत्तो) उसके अनन्तर (विदियस्सादिमणिसेगोत्ति) द्वितीय गुणहानि के प्रथम निषेक पर्यन्त (विसेसहीणं) विशेष हीन क्रम से द्रव्य दिया जाता है ॥161॥

www.JainKosh.org

गुणहानि

- गुणाकाररूप हीन-हीन द्रव्य जिसमें पाया जाता है ऐसे समयों के समूह का नाम गुणहानि है ।

गुणहानि आयाम

- एक गुणहानि के समयों को गुणहानि आयाम कहते हैं ।

नाना गुणहानि

- गुणहानियों के समूह को नाना गुणहानि कहते हैं ।

www.JainKosh.org

अन्योन्याभ्यस्त राशि

- नानागुणहानि की संख्या के बराबर 2 की संख्या को रखकर परस्पर गुणाकार करने से जो गुणनफल प्राप्त होता है उसे अन्योन्याभ्यस्त राशि कहते हैं ।

निषेकहार

- गुणहानि आयाम से दुगुने परिमाण को निषेकहार कहते हैं।

चय

- श्रेणी व्यवहार गणित में समान हानि या समान वृद्धि के परिमाण को चय कहते हैं ।

www.JainKosh.org

समयप्रबद्ध का बँटवारा - उदाहरण

- समयप्रबद्ध = 6300 परमाणु
- स्थिति = 48
- गुणहानि आयाम = 8

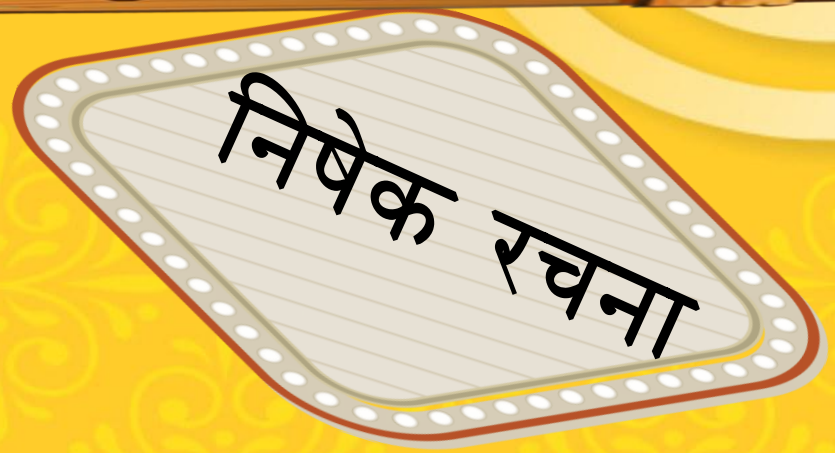

पद	सूत्र	संख्या
नाना गुणहानि	$\frac{\text{स्थिति}}{\text{गुणहानि आयाम}}$	$\frac{48}{8} = 6$
अन्योन्याभ्यस्त राशि	$2^{\text{नाना गुणहानि}}$	$2^6 = 64$
निषेकहार	$2 \times$ गुणहानि आयाम	$2 \times 8 = 16$

◎अंतिम गुणहानि का द्रव्य $= \dfrac{\text{समयप्रबद्ध}}{\text{अन्योन्याभ्यस्त राशि} - 1}$

$= \dfrac{6300}{64-1} = \dfrac{6300}{63} = 100$

◎पूर्व की गुणहानियों का द्रव्य इससे दुगुना-दुगुना है, अतः

पाँचवी गुणहानि का द्रव्य	200
चतुर्थ गुणहानि का द्रव्य	400
तीसरी गुणहानि का द्रव्य	800
द्वितीय गुणहानि का द्रव्य	1600
प्रथम गुणहानि का द्रव्य	3200

समयप्रबद्ध का बँटवारा - उदाहरण

समयप्रबद्ध = 6300 परमाणु

नाना गुणहानि = 6

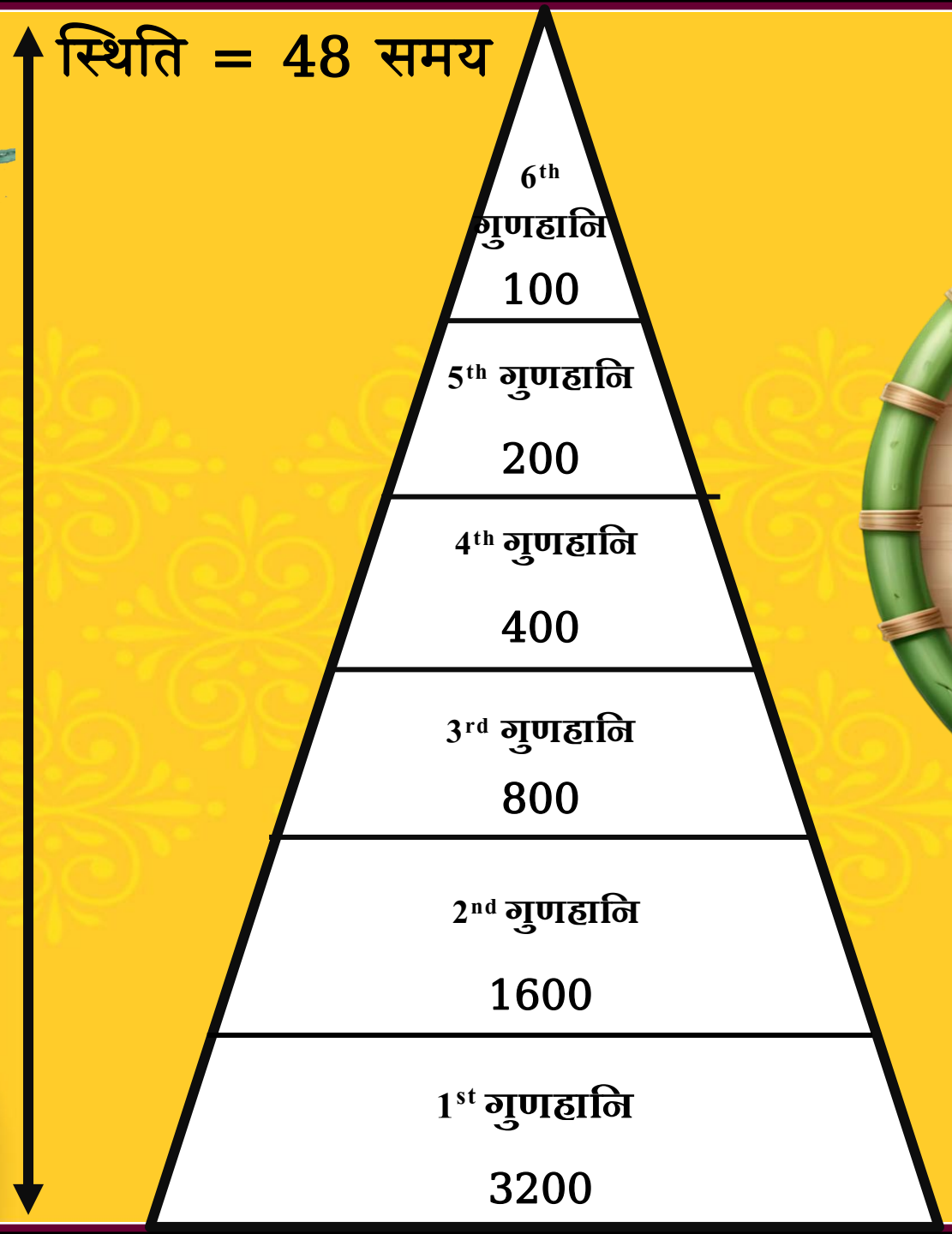

इस प्रकार प्रथम गुणहानि से अंतिम गुणहानि तक द्रव्य आधा-आधा होता है ।

प्रथम गुणहानि

◎प्रथम निषेक = $\frac{\text{समयप्रबद्ध}}{\text{साधिक डेढ़ गुणहानि}}$

$= \frac{6300}{12\frac{39}{128}} = 512$

◎चय = $\frac{\text{प्रथम निषेक}}{\text{निषेकहार}} = \frac{512}{16} = 32$

◎प्रथम निषेक से अगले निषेक एक-एक चय हीन हैं ।
अतः प्रथम गुणहानि इस प्रकार प्राप्त होगी →

निषेक संख्या	प्रथम गुणहानि
8th निषेक	288
7th निषेक	320
6th निषेक	352
5th निषेक	384
4th निषेक	416
3rd निषेक	448
2nd निषेक	480
1st निषेक	512

प्रथम गुणहानि के सर्व-द्रव्य का प्रमाण = 3200

www.JainKosh.org

बिदिये बिदियणिसेगे, हाणी पुव्विल्लहाणिअद्धं तु ।
एवं गुणहाणिं पडि, हाणी अद्धद्धयं होदि ॥162॥

- अन्वयार्थ – (बिदिये) द्वितीय गुणहानि के (बिदियणिसेगे) दूसरे निषेक में (पुव्विल्ल हाणि अद्धं तु) पूर्व गुणहानि के चय से आधा चयरूप (हाणी) हानि होती है ।
- (एवं) इसी प्रकार (गुणहाणिं पडि) प्रत्येक गुणहानि में (अद्धद्धयं) आधा-आधा प्रमाण (हाणी) हानि होती जाती है ॥162॥

द्वितीय गुणहानि

- प्रथम गुणहानि के अंतिम निषेक से एक चय और घटाने पर द्वितीय गुणहानि का प्रथम निषेक आता है । (288 – 32 = 256)
- प्रथम गुणहानि से आगे-आगे की गुणहानियों में चय आधा-आधा होता जाता है । अतः द्वितीय गुणहानि का चय = $\frac{32}{2}$ = 16
- अतः द्वितीय गुणहानि इस प्रकार होगी →

द्वितीय गुणहानि
144
160
176
192
208
224
240
256

द्वितीय गुणहानि के सर्व-द्रव्य का प्रमाण = 1600

www.JainKosh.org

शेष गुणहानियाँ भी इसी प्रकार निकालना

1st गुणहानि	2nd गुणहानि	3rd गुणहानि	4th गुणहानि	5th गुणहानि	6th गुणहानि
288	144	72	36	18	9
320	160	80	40	20	10
352	176	88	44	22	11
384	192	96	48	24	12
416	208	104	52	26	13
448	224	112	56	28	14
480	240	120	60	30	15
512	256	128	64	32	16

समयप्रबद्ध का बँटवारा - उदाहरण

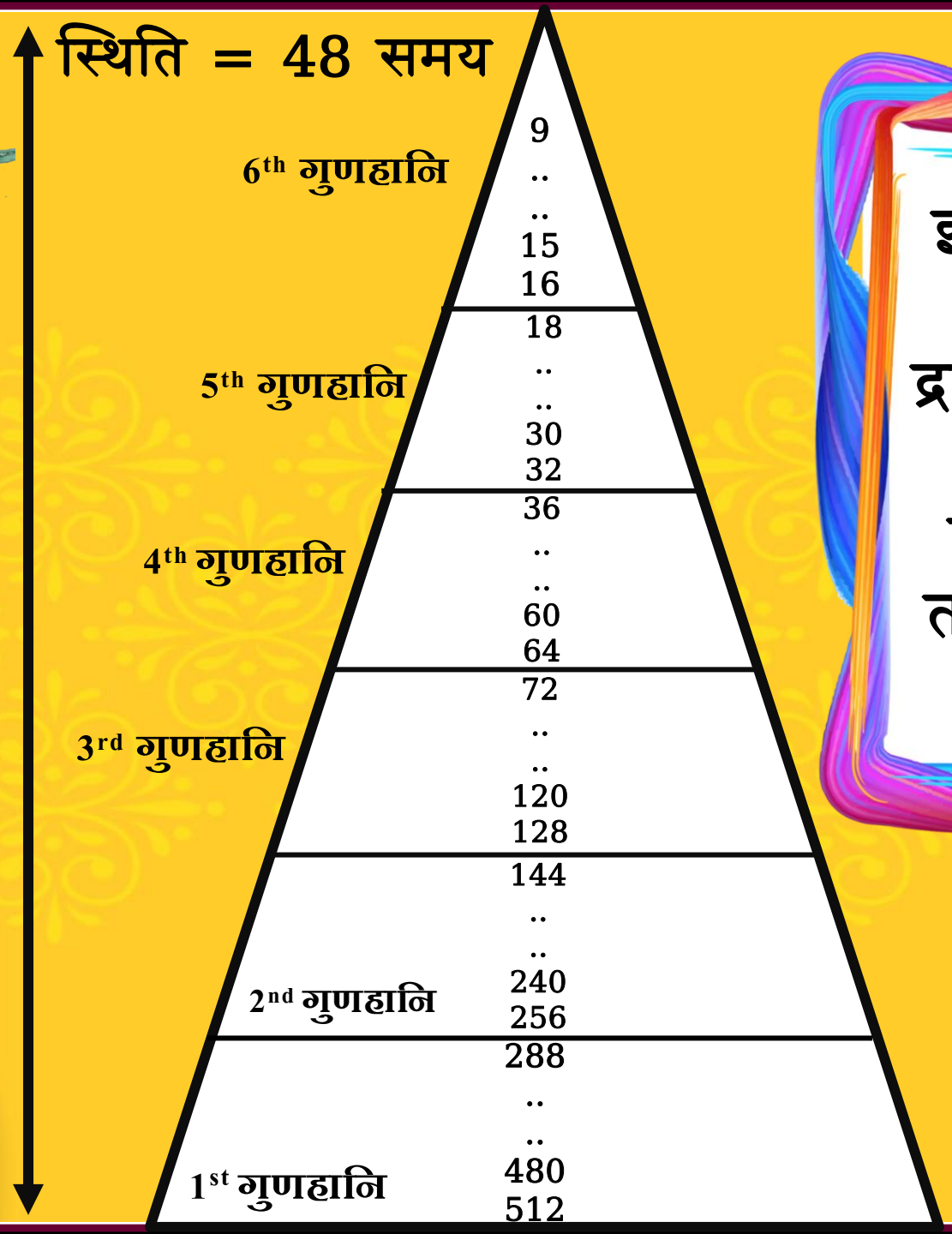

इस प्रकार प्रथम निषेक से अंतिम निषेक तक द्रव्य घटता हुआ जाता है ।
इसलिए नीचे से ऊपर तक घटता क्रम दिखाया जाता है ।

समयप्रबद्ध = 6300 परमाणु

नाना गुणहानि = 6

गुणहानि आयाम = 8 समय